धर्म-प्रेम-तरंग



लेखिका—श्रीमती धर्मदेवी

दूसरी बार] १९२४ ई० [२००० प्रति

श्रीराधारमण की जय

उत्सर्ग

प्रेम, आनंद और उत्साह-सहित

इस

धर्म-प्रेम-तरंग को

यह दासी

श्रीवृषभानुदुलारी कृष्णजी की प्यारी

लाडली राधाजी के

चरण-कमलों में आशा-पूर्वक

समर्पण

करती है। क्योंकि—

"राधे तू बड़भागिनी, कौन तपस्या कीन;
तीन लोक चौदह भुवन-पति तेरे आधीन।"

भगवद्दासों की दासी—

अधम 'धर्म'

श्रीराधेश्यामो जयति

भूमिका

श्रीव्रजविहारी नंदनंदन भगवान् श्यामसुंदर ने गीताजी में अर्जुन को अपना सर्वव्यापक स्वरूप दर्शन के समय उपदेश किया था कि—"वचन में काव्य मैं हूँ" निस्संदेह यह बात ठीक माननी पड़ती है कि काव्य भगवान् के उन कृपामय भावों में है जिसके द्वारा मन के विचार प्रकट कर उनके आकर्षण पूर्ण तथा महा मनोरंजन चित्र खींचे जाते हैं। भगवान् बिरले ही मनुष्य को काव्य-शक्ति प्रदान करते हैं। यद्यपि बहुत से महानुभावों का कहना है कि काव्य-रस का प्रसाद स्वभावतः ही प्रत्येक मनुष्य के मन में व्यापक है, पर यह तो स्वयं सिद्ध है कि संसार में ऐसे मनुष्यों की संख्या न्यूनाधिक केवल एक ही प्रतिलक्ष मिलेगी जो इसके रस में पूर्णरूप से निमग्न होकर अपने भावों द्वारा अन्य मनुष्यों के जीवन में उनके गुणानुसार एक अद्भुत परिवर्तन कर देते हैं।

२. यह विचार ठीक ही जानना होगा कि काव्य भगवद्दर्शन की संपूर्ण तथा नानाप्रकार की युक्तियों में से एक है बहुत प्राचीन समय के अतिरिक्त हमें वर्तमान युग में अपने पवित्र भारत के अंदर श्रीस्वामी तुलसीदास स्वामी सूरदास तथा मीराबाईजी,

आदि ऐसी प्रसिद्धव्यक्तियाँ मिलती हैं जिनको अपने काव्य-रस ही के द्वारा भगवद्दर्शन प्राप्त हुए। यदि ढूँढे जायँ तो अन्य और भी कवि ऐसे मिलेंगे जिन्होंने काव्य-योग द्वारा अपने जीवन के परम पद को पाया था।

३. हमें आशा है कि हमारे इस विचार में लेशमात्र भी अत्युक्ति का प्रभाव सम्मिलित नहीं है कि यदि अन्य आधुनिक समय के कवि महोदय भी काव्य का ठीक-ठीक उपयोग कर उस को भगवद्-विनय, वंदना की युक्ति बनाएँ तो वह भी एक दिन उन्नति करते-करते भगवद्-कृपा के अधिकारी हो सकते हैं।

४. काव्य पूर्वजों तथा बुद्धिमानों ने उस ढंग के निबंध को कहा है जो मन में असर करे और सुननेवाले का मन उसके श्रवण से ही तड़प उठे और जो भाव काव्य में दर्शाए हों उनका ऐसा ही चित्र उस श्रोता के सामने खिच जाए जैसे कि काव्य-कर्त्ता ने स्वयं अनुभव किया था। मुझे हर्ष से कहना होता है कि इस पुस्तक में जिस देवी स्वरूप महिला के विचार और भाव आनंद की महा रोचक नदी बहा रहे हैं उसको भी ईश्वर ने महती कृपा से काव्य-रस से उन्मत्त उन महिलाओं की श्रेणी में सम्मिलित कर दिया है जिनकी कविता प्रभाव-पूर्ण तथा आकर्षणकारिणी होकर श्रोता के मन और हृदय को व्याकुल और कभी कभी अश्रुद्वारा उनकी प्रशंसा करने पर उनको अनि-

चार्य कर देती है। श्रीमती धर्मदेवी के काव्य में केवल भगवद्भक्ति के और किसी भाव का अंश नहीं है और यह पुस्तक उनके प्रथम उद्योग का फल है। इन भावों की प्रशंसा वही कर सकते हैं जिनके हृदय में एक भगवद्-प्रेम ही है और जो एक चोट सहे हुए मनुष्य की गति को भली भाँति अनुमान कर सकते हैं।

५. श्रीमती धर्मदेवी एक बड़ी सुशीला भक्त उदार तथा भाव-युक्त स्त्री हैं आपकी आयु अधिक नहीं है और वह अपने ईश्वर स्वरूप पति बाबू दयाशंकरजी के छब्बीस वर्ष की आयु में राजयक्ष्मा के रोग से सं० १९७२ में परलोक-गमन के उपरांत भगवद्भक्ति की प्राप्ति में परायण रहती हैं।

६. श्रीमतीजी के काव्य का प्रेम-रस-पूर्ण होना आश्चर्यजनक बात नहीं है। आप भारत के प्रसिद्ध कवि श्रीयुत मलिकुशुअरा मुं० द्वारिकाप्रसाद उफ़क़ लखनऊ-निवासी की बड़ी पुत्री हैं जो सं० १९७० में परलोक को सिधारे। आपके मायके का घराना अपने काव्य में प्रसिद्ध है। मुं० रामसहाय तमन्ना डिप्टी इन्सपेक्टर ऑफ़ स्कूलस एवं मुं० माताप्रसाद साहब नैसां आपके ताऊ उर्दू के प्रसिद्ध कवि तथा लेखक हैं, जिनको देश में बड़ा मान प्राप्त हुआ है। आपके बड़े भाई परलोकवासी श्रीयुत मुं० रामशंकर-प्रसादजी पत्र-सम्पादक तथा साहित्य-प्रेमी थे। आपके छोटे भाई विश्वेश्वरप्रसाद मुनव्वर उर्दू के नवयुवक कवियों में आज कल

अच्छा मान प्राप्त कर रहे हैं और श्रीयुत बाबू विष्णुप्रसादजी मुक़द्दर भी काव्य-रस से अनभिज्ञ नहीं हैं। आपके श्वशुर मुं० प्रभुदयाल भी, जिनकी चरण छाया में आप जीवन व्यतीत कर रही हैं, काव्य-प्रशंसक हैं।

७. हमें आशा है कि भक्तगण और काव्य तथा संगीत-प्रेमी स्त्री और पुरुष प्रेमपूर्वक श्रीमतीजी के साहस बढ़ाने के लिये उन के इस प्रथम उद्योग की प्रशंसा का अधिकारी समझ कर इस पुस्तक को स्वीकार करेंगे और यदि इस भूमिका में व्यक्तीय सद्भाव के कारण कहीं अत्युक्ति से काम लिया गया हो, तो उसमें अपने भी भावों को संकुचित न रखकर सम्मिलित करेंगे।

८. अंत में भगवान् से प्रार्थना है कि श्रीमती के पुत्र श्याम-किशोर अपनी ऐसी पूजनीय माता की प्रतिष्ठा तथा मर्यादा बढ़ाने को शीघ्र ही समर्थ हों।

नौबस्ता, लखनऊ
माघ सुदी द्वादशी
सं० १९७७

भवदीय—
(हस्ताक्षर) गुणानंद शर्मा उन्याल
काव्यतीर्थ

निवेदन

उन आनंदकंद भगवान् कृष्णचंद के चरण-कमलों में कोटि-कोटि प्रणाम करती हूँ जिनकी अपरंपार महिमा का ब्रह्मा और महादेव आदि देवाधिदेव भी पार नहीं पाते और जिनका विश्व-विमोहन स्वरूप कोटि-कोटि कामों को लजानेवाला, योगियों का गुप्तधन, भक्तों का जीवनाधार और प्रेमिनी गोपियों का परम प्राण है। इस विश्वास से कि भगवान् करुणासागर, दीनदयाल और शरणागत-वत्सल हैं, जब कभी किसी ने सच्चे हृदय और पूर्ण प्रेम से उनका स्मरण किया है, तो उन्होंने उसी क्षण उसी रूप में आकर उसे दर्शन देकर उसका काज सँवारा है—द्रौपदी, गोपियाँ, ग्राह-ग्रसित गज, मीराबाई आदि इसकी उदाहरण हैं—भगवान् को रिझाने, मनाने और उन्हीं के श्रीचरणों में अपना मन लीन करने के लिये कुछ टूटे-फूटे पदों को जोड़कर इस पुस्तक की रचना की गई है। इसके अधिकांश भजनादि श्रीकृष्ण महाराज के वियोग-बिथा-रूपी अथाह सागर में डूबी हुई गोपियों की ओर से कहे गए हैं। मैं एक भगवद्दासों की दासी और विद्या-रहित नारी हूँ, इसलिये इस पुस्तक के पढ़नेवाले सज्जन नर-नारियों से सविनय निवेदन है कि मेरी भूल-चूक और अवगुणों पर

ध्यान न देकर मेरे भक्ति-भाव से ही लाभ उठावें। क्योंकि मुझे विश्वास है कि मेरी कविता बहुत भद्दी है। यदि यह पुस्तक मेरी ही भाँति विरह-वियोग के दुःख-सागरमें बहनेवाली मेरी किसी दुःखिनी बहन के लिये नाव के समान सहारा दे सके, तो मैं अपनी मिहनत को अवश्य सफल समझूँगी।

धर्मदेवी

धर्म-प्रेम-तरंग

१ वंदना

दो० प्रथम करूं मैं वंदना, तुम्हरी हे गणनाथ।
ममपुकार भगवत सुनो, लाज तुम्हारे हाथ॥

जगत के गणेश स्वामी, काज तुम सँवारे हो।
प्रथम पूजा तुम्हरी होत, जग के रखवारे हो।
नाम लेत सिद्धि देत, मात पिता प्यारे हो॥ जगत० १
सकट सब टार देत, बिपत से उबार लेत।
सुख सब जग केर देत, वेद कहि पुकारे हो॥ जगत० २
'धर्म' अति अनाथ दीन, दासी है पति-विहीन।
अब तो तुम्हरी शरण लीन, श्रीगणेशप्यारेहो॥ जगत० ३

सो० 'धर्म' जीवनस्तंभ, धर्मकेत या मन बने।
करूं पुस्तकारंभ, धर मन बिच अभिलाष यह॥

२ ग़ज़ल

शिकायत है बजा अपनी श्रीमुरलीमनोहर से।

दिया होगा दरश कुब्जा को हम तो उम्र भर तरसे ॥
रवाँ हो जायँगी दो चार जमुना और मथुरा में ।
वह दरिया बह रहा है आँसुओं का दीदए तर से ॥
पड़ा इक बूँद स्वाती का न मुँह में आज सीपी के ।
उमँड़कर ज़ोर से बादल जो बरसे भी तो क्या बरसे ॥
मुझे वहशत से देखा लोटते फिरते जो मधुवन में ।
दिया साया वहीं जमुना ने आकर अपनी चादर से ॥
रवाँ हैं दूध की धाराएँ हरसू कुंज गलियों में ।
चरण छूने को लहरें आ रही हैं क्षीरसागर से ॥
चला है इम्तिहाँ लेने को शायद जज़्बे उल्फ़त का ।
ज़ुनूँ को छेड़ की सूझी है मेरे क़ल्ब मुज़्तर से ॥
करो ऐ 'धर्म' दिल से क़स्द अब मथुरा के जाने का ।
मिला देगा कोई हरिभक्त तुझको श्यामसुंदर से ॥

३ ग़ज़ल

हमसे बिछुड़े श्यामले को इक ज़माना हो गया ।
हम भरमते ही रहे हरि को ठिकाना हो गया ॥

रात दिन की सोहबतें हमको नहीं हैं भूलतीं।
हम समझते थे हमारा, अब बेगाना हो गया॥
था कहा हमसे तुम्हारी हम ख़बर लेंगे ज़रूर।
ऊधो तुमको भेजकर हरि को बहाना हो गया॥
छोड़कर मथुरा के सुख अब क्यों यहाँ आने लगे।
चार दिन के वास्ते गौएँ चराना हो गया॥
हरि की तो सुख चैन से गुज़रे हमारी क्या पड़ी।
ऊधो ग़म का मेरे हिरदै में ख़ज़ाना हो गया॥
ले गए सब ऐश की बातें हमारी अपने साथ।
ग़म में अब नँदलाल के तन मन जलाना हो गया॥
अब ख़बर ले लो 'धरम' की आके जल्दी कृष्णजी।
आपके चरणों से अब दिल को लगाना हो गया॥

४ ग़ज़ल

इक झलक श्रीराधिकावर मुझको आप दिखाइए।
तान बंसी की मनोहर एक बार सुनाइए॥
द्रौपदी की लाज राखी प्रभू दीनानाथ ने।

इस जहाँ में आबरू अब मेरी श्याम बचाइए ॥
गज की बानी सुनके धाए नंगे पाओं आप थे।
श्यामसुंदर आके मेरा हाल सब सुन जाइए ॥
छीनकर माखन लुटाते गोपियों का कुंज में।
प्रेम का प्याला हमें इक बार आय पिलाइए ॥
एक उँगली पर गोवर्धन था उठाया आपने।
भारी गिरि सा भार मेरा दीनानाथ उठाइए ॥
है ये मन चंचल जो हो हरि से विमुख तो क्या करूँ।
करके किरपा आप अपनी ओर को अपनाइए ॥
यह जगत बेथाह सागर 'धर्म' है मँझधार में।
बाँह गह के मेरी केशवमूर्ति पार लगाइए ॥

५ ग़ज़ल

छटा निज श्यामले मोहन दिखा दोगे तो क्या होगा।
मनोहर तान बंसी की सुना दोगे तो क्या होगा ॥
अता की भक्ति लाखों को उन्हींने मुक्ति पाई है।
ज़रा सा प्रेम का रस्ता बता दोगे तो क्या होगा ॥

कहाँ थी वस्त्र की हस्ती जो बढ़ता ही चला जावे।
ये किरपा श्यामले अपनी दिखा दोगे तो क्या होगा॥
ये मन चंचल हज़ारों कोस बैठे बैठे जाता है।
मेरे मन को तरफ़ अपनी लगा लोगे तो क्या होगा॥
उठाया तुमने गोबरधन था प्यारे एक उँगली पर।
ज़रा से भार को मेरे उठा लोगे तो क्या होगा॥
चरण की अपने भक्ती 'धर्म' के दिल में करो पैदा।
शरण में अपनी अब हमको छुपा लोगे तो क्या होगा॥

६ ग़ज़ल

श्यामसुंदर तेरा जिस वक़् खयाल आता है।
कह नहीं सकती ज़बाँ दिल में जो हाल आता है॥
हो नहीं सकता बयाँ तेरी जुदाई का ग़म।
आँख से अश्क जो आता है लाल आता है॥
नाम सुनकर तेरा दिल जान से ख़ुश होती हूँ।
जब कि कहती है सखी नंद का लाल आता है॥
जब गई जमना तो ऊधो भी नज़र आए वहीं।

बोल उठा दिल कि कोई लेके सवाल आता है॥
वस्त्र जो पहने हैं ऊधो वह श्रीकृष्ण के हैं।
हाथ में देखो नज़र हरि का रुमाल आता है॥
कोई कहती हैं कि है भेस उसी प्यारे का।
वैसा लेकिन नहीं चेहरे पे जलाल आता है॥
देखती हरि को तो आईनए दिल ख़ुश होता।
जोग की ठेस से इस शीशे में बाल आता है॥
सुनती थी बंसी मनोहर मैं इन्हीं कानों से।
जोग किस तरह सुनें दिल में मलाल आता है॥
ज़िंदगी 'धर्म' गराँ बार हुई दुनिया में।
याद इस वक़्त मुझे दीनदयाल आता है॥

७ ग़ज़ल

भूले हैं नंदसुवन मेरी मुहब्बत कैसी।
हो गई जाके वहाँ दिल में कुदूरत कैसी॥
ऊधो कहदेना ज़रा जाके यह हरि से अहवाल।
आपके ग़म में मेरी हो गई हालत कैसी॥

दिल नहीं चाहता है उनका यहाँ आने को।
मेरी सूरत से उन्हें हो गई नफ़रत कैसी॥
जो है मंजूर उन्हें मारना अपने ग़म में।
भेजके तुमको ये करते हैं इनायत कैसी॥
जानना था मुझे घनश्याम को मैं जान चुकी।
ऊधो तुम आए हो करने को नसीहत कैसी॥
हरि ने हमसे था कहा जल्द पलट आएँगे।
फिरके आने में मेरी होगई क़िस्मत कैसी॥
भेजती उनके बुलाने को मैं सखियों को थी।
उठ गई बिर्ज से अब मेरी हुकूमत कैसी॥
'धर्म' दिल में जो नहीं भक्ति तो जीना है अबस।
प्रेम का अक्स अगर हो न तो उल्फ़त कैसी॥

८ ग़ज़ल

मचलता शौक़ है दिल में मदनमोहन के दर्शन का।
कि दिल में कर लिया है क़स्द मैंने बिन्दराबन का॥
उठा परदा जो सिर पर का वो परदा हो नहीं सकता।

मुझे साया फ़क़त दरकार है अब तेरे दामन का ॥
यही है आरज़ू दिल की जो मनमोहन करें पूरी।
न आए लब पै हरगिज़ हाल जो है ग़मज़दा मन का ॥
है इक बारे गराँ यह ज़िंदगी मुझको ज़माने में।
पड़ा मेरे गले में है यह गोया तौक़ आहन का ॥
नहीं बाग़े जहाँ में एक दम आराम की सूरत।
न हो गर बाग़बाँ कोई तो फिर क्या लुत्फ़ गुलशन का॥
अरे क़ासिद ख़बर कर दे 'धरम' की श्यामसुंदर को।
तड़पकर जब निकलता दिलसे है तब नाम मोहन का॥!

६ ग़ज़ल

दाद भी सुनता है तू सुनता है तू फ़रियाद भी।
वक़्त मुशकिल तू ही करता है मेरी इमदाद भी ॥
जाल में फँसना न हरगिज़ यह तिलिस्मी बाग़ है।
दाम लेकर है यहाँ बैठा हुआ सैयाद भी ॥
आपकी जलवागरी हरसू नुमायाँ देख ली।
कर दिया वीरान जिसको फिर किया आबाद भी ॥

आपकी भक्ती न जब तक हो तो क्या हासिल मुझे।
क़ैद दुनिया से अगर हो जाऊँ मैं आज़ाद भी॥
इल्तिजा मेरी यही है आपसे शामो सहर।
हम से जीते जी न छूटे यह अशर्फ़ाबाद भी॥
और किरपाएँ तो स्वामी आपकी हैं 'धर्म'पर।
काश अपनी भक्ति का दे दीजिए परशाद भी॥

१० ग़ज़ल

निशि दिन यह श्यामसुंदर तुमसे विनय हमारी।
परमात्मा हो जल्दी मुझ पर दया तुम्हारी॥
कर जोड़कर यह ऊधो घनश्याम को सुनाना।
तन की ख़बर नहीं है बस याद में तुम्हारी॥
हम नारि मंदमति हैं क्या जोग भोग जानें।
इक रम रहा है मन में मेरे वही मुरारी॥
रखती नहीं हूँ दिल में दो बांह का सहारा।
वह चार हाथवाले रक्षा करें हमारी॥
गिरि को उठाके तुमने सब बिर्ज को बचाया।

रख करके लाज मेरी लो भार मेरा भारी ॥
यह आरज़ू 'धरम' की जल्दी क़ुबूल कीजे।
हूं पार इस जहां से हे श्यामले विहारी ॥

११ भजन

या जग में मत कर चतुराई।

जोड़ जोड़ धन राखन लागे समय पड़े को भाई।
अंत समय जब आन पड़ो है काम न आवतएको पाई ॥
पिता पुत्र सब रोवत छोड़े बिलखत छोड़ा भाई।
नौ दस मास उदर में राखत सो तलफत छोड़ी तुम माई ॥
तन मन धन सब हित सो वारो दृढ़कर प्रीति लगाई।
सो तिरिया कर मल पछतावे अबतो करगए आसपराई॥
जा तन से तुम नाता मानो सो तन राख न जाई।
जीव हेत अब कब तक रोवो यह तन छोड़त वह तन पाई॥
हरि से हेत कियो नहिं रे मन नहिं जग पाइ भलाई।
दुहूँ ओर से अपयश पायो अब प्रानी सिर धुन पछताई ॥
झूठा है सब जग को नाता चार दिना को भाई।

नाम हरीको काम आइहै अंतसमय कोई साथ न जाई ॥
तन से काम करो या जग के मन में कृष्ण रमाई ।
आय जगतमन ऐसेहि राखो जिमि नर राखत दूध खटाई ॥
'धर्म' कहत कर जोर श्यामले बहुत सही कठिनाई ।
बाँह गहो प्रभु पार लगाओ दुखभंजन तुम कुँवर कन्हाई ॥

१२ ग़ज़ल

अरे ऊधो मेरा पैग़ाम कह देना ये मोहन से ।
जुदाई रूह की कबतक गँवारा हो मेरे तन से ॥
न दिल अपना खुश आता है न कुछ मन को सुहाता है ।
हमारे श्याम जिस दिन से गए हैं बिन्दराबन से ॥
वही हर वक़्त जलवा मेरी आँखों में समाया है ।
बजाकर बाँसुरी जब वह निकल जाते थे मधुवन से ॥
उचाट अपनी तबीयत है तुम्हारे रंज फ़ुरकत में ।
मेरे आँसू जो आकर पोछ दें ख़ुद अपने दामन से ॥
अता की ज़िंदगी हरि ने है हमको रंज सहने को ।
कलेजा हो गया ऊधो है मेरा सख़्त आहन से ॥

गए चितचोर जब से गुल भी मुझको ख़ार होते हैं।
न है तक़दीर से शिकवा शिकायत कुछ न गुलशन से॥
मिले भक्ती 'धरम' को ज़िंदगी फिर चैन से गुज़रे।
मेरा ग़म दूर कर दें श्यामसुंदर अपने दर्शन से॥

१३ ग़ज़ल (अस्तुति)

लगी रहती है रट हरदम ज़बाँ को श्यामसुंदर की।
इनायत हो ज़रा मुझ पर भी श्रीमुरलीमनोहर की॥
नहीं ताक़त है जो अस्तुति करूँ मैं राधिकाबर की।
चरण रज चाहनेवाली है दासी आपके घर की॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै॥ १॥
हुई आनंद मथुरा की ज़मी जलवा दिखाने से।
पिता माता को फिर अपने छुड़ाया क़ैदख़ाने से॥
गए गोकुल को जसुमत नंद हैं ख़ुश लाल पाने से।
लुभाया गोपियों को माधुरी बंसी बजाने से॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै॥ २॥
कहाए जग में राधाकृष्ण बस हो भक्त श्यामा के।

न माना प्रेम को कुछ रुक्मिणी और सत्यभामा के ॥
लिए भक्ती के बस किस प्रेम से तंदुल सुदामा के।
वही हैं देनेवाले भक्ति और दुनिया के सामां के॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै ॥ ३ ॥
दुशासन दुष्ट ने अनरीति की रँग पड़ गया फीका।
बढ़ाया चीर तुमने कृष्ण कहते द्रौपदी जी का॥
सँवलिया साह ने धन था दिलाया जाके हुंडी का।
जो कुछ कारज पड़ा वह सब निभाया दास नरसी का॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै ॥ ४ ॥
बचा आफ़त से व्रज उँगली पै जब रोका गोवर्धन को।
मेरे इस भार की कर दे ख़बर अब कोई मोहन को॥
सरहने आके मेरे दें वो जुंबिश अपने दामन को।
उठा लें भार मेरा फिर तसल्ली हो मेरे मन को॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै ॥ ५ ॥
इधर केवट ने दुखसागर में मेरी नाव को छोड़ा।
उधर जो साथ में थे अब उन्होंने मुझसे मुँह मोड़ा॥

कहूँ क्या ग़म की हालत हो गया पैसे का भी तोड़ा।
अरे भगवान् मेरे हाल को सुनते रहो थोड़ा॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै॥ ६॥
न प्यारी जान है मुझको न प्यारा माल है मुझको।
है बाक़ी ज़िंदगी जितनी वही जंजाल है मुझको॥
रहे क़ायम ज़माने में जो बख़्शा लाल है मुझको।
चलूँ मैं उसके कंधे पर यही सुखपाल है मुझको॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै॥ ७॥
लगे जब ध्यान मनमोहन से तब दुनिया से निर्भय हो।
न जीने से ख़ुशी हासिल न मरने से ज़रा भय हो॥
छुटें नब्ज़ें इधर मेरी उधर मन आपमें लय हो।
ज़बाँ से बस यही निकले कि राधाकृष्णकी जय हो॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै॥ ८॥
तुम्हारे सामने भगवत यह दम मेरा निकल जाए।
जो बिगड़ी बात हो दुनियाकी इकदमसे सँभलजाए॥
इनायत कीजिए थोड़ी तो रंगत ही बदल जाए।

सवँलिया बाँसुरीवाला मुझे इक बार मिल जाए ॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै ॥ ९ ॥
तरस खाएँ 'धरम' के हाल पै अब आप दुख-भंजन ।
निछावर हो चुका मुद्दत से मेरा आप पर तन मन ॥
ज़बाँ से सिर्फ़ अस्तुति है नहीं कुछ हाथ में है धन ।
यह क़िस्सा हो चुका है ख़त्म अब तो दीजिए दर्शन ॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै ॥ १० ॥
न पाई एक दम की भी ज़रा आराम दुनिया में ।
हमारे दुख-निवारक आप ही हो श्याम दुनिया में ॥
न सच्ची भक्ति है मन में न है धनधाम दुनिया में ।
फ़क़त रहता ज़बाँ पर है तुम्हारा नाम दुनिया में ॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै ॥ ११ ॥
पढ़े जो अस्तुती मेरी सम्हालें आप किरपा कर ।
जो है मज़मून उसको भी निभा लें आप किरपा कर ॥
हों मिसरे जो खटकते वह बना लें आप किरपा कर ।
मेरे अरमान को स्वामी निकालें आप किरपा कर ॥

श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै ॥ १२ ॥
न है मज़मून अच्छा कुछ भरा है प्रेम-रस इसमें ।
दिखाई है फ़क़त चरणों के दर्शन की हवस इसमें ॥
रहा करती है किश्ती डगमगाती हर नफ़स इसमें ।
उतारें पार जल्दी अब न हो जाएँ बरस इसमें ॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै ॥ १३ ॥
जो देखे अस्तुती पढ़करके फिर उसका यह फल पाए ।
ज़रूरत हो उसे जिस चीज़की फ़ौरन ही मिल जाए ॥
जो अटका काम दुनियावी हो इकदम में निकल जाए ।
मिले भक्ती चरण-रजकी जनम उसका सँभल जाए ॥
श्रीराधारमन की जै श्रीराधारमन की जै ॥ १४ ॥

१४ ग़ज़ल (अस्तुति)

विनय बस एक है तुमसे हमारी ।
दरश दे दो श्री बाँके बिहारी ॥
बिसारो मत शरण आए को अपनी ।
सँभालो सब मेरे कारज मुरारी ॥

निवारो दुःख मेरे श्यामसुंदर।
उतारो पार किश्ती यह हमारी॥
सहारा आपसे स्वामी का करके।
धरूं फिर ध्यान किसका हे विहारी॥
तुम्हारा द्वार तज किस घर पै जाऊँ।
कहो अब क्या करूं संकट है भारी॥
उठाया तुमने गिरिवर एक नख पर।
बचाए बिर्ज के नर और नारी॥
उठाओ भार मेरा आके गिरिधर।
कि हरदम लाज है तुमको हमारी॥
किया क्या क्या न तुमने सब किया है।
दिखाओ अब मुझे महिमा मुरारी॥
निहारो एक नज़र मेरी तरफ़ भी।
श्रीघनश्याम और राधा पियारी॥
छुड़ाया ग्राह के फंदे से गज को।
विभीषण को दिलाया राज भारी॥

खबर ली रुक्मिणी की द्वारका से।
बड़ी मीरा पै थी किरपा तुम्हारी ॥
किया जब याद तुमको द्रौपदी ने।
दया करके बढ़ाया चीर भारी ॥
बनाया रंक से राजा सुदामा।
अनाथों के तुम्हीं हो हे विहारी ॥
सदा काज अपने भक्तों के बनाए।
पड़ी है आनके अब मेरी बारी ॥
शरण में आपकी हूं राधिकावर।
मिले आनंद हो किरपा तुम्हारी ॥
कोई सूरत नज़र आती नहीं है।
फिरूं भटका कहाँ तक हे मुरारी ॥
करो मंजूर मेरी इल्तिजा तुम।
मदन गोपाल वृंदावन विहारी ॥
करो दिल से ज़रा इंसाफ़ अपने।
कि है वाजिब ख़बर लेना हमारी ॥

हुई भक्ती की दिलमें चाह पैदा ।
करूं हासिल कृपा गर हो तुम्हारी ॥
चरण पर शिर नवा जिह्वा से बोलो ।
सियापति कृष्णजी की जै जैकारी ॥
'धरम' कर जोड़कर करती है अस्तुति ।
क्षमा कीजै मेरे अपराध भारी ॥

१५ ग़ज़ल

कब तक सितम रहेगा यह मुझ पर जनाब का ।
मुँह से ज़रा हटाइए परदा नक़ाब का ॥
बाग़े जहाँ में आए थे आराम के लिये ।
पाओं में अपने चुभ गया काँटा गुलाब का ॥
उफ़ ज़िंदगी ज़माने में आहन सितम हुई ।
जिसको लकब जहाँ में मिला था हबाब का ॥
सब राज़ दिल तो हो चुके हैं आप पर अयाँ ।
बाक़ी नहीं है अब कोई परदा हिज़ाब का ॥
इतना नहीं है दम जो सवाल आपके सुनूँ ।

आता कभी नहीं मुझे देना जवाब का ॥
है चाह भक्ति की मुझे दर्शन की आरज़ू ।
दिल को 'धरम' के शौक़ नहीं है ख़िताब का ॥

१६ ग़ज़ल

आह में मेरी रहा कुछ भी असर बाक़ी नहीं ।
ख़ुश निगाही उनकी मेरे हाल पर बाक़ी नहीं ॥
जान मन तुम पर निछावर कर रही सौ दिल से हूँ ।
दिल के देने में रही कोई कसर बाक़ी नहीं ॥
इक ज़माना हो गया फ़ुरक़त में हरि की अब हमें ।
ज़ुल्म सहने को रहे क़ल्बो जिगर बाक़ी नहीं ॥
जी में आता है यही मेरे कि बस दम तोड़ दूँ ।
उनके दिल में है मेरी उल्फ़त अगर बाक़ी नहीं ॥
मुद्दतों से जान देने के लिए तैयार हूँ ।
मौत से मुझको रहा कोई ख़तर बाक़ी नहीं ॥
'धर्म' से मुहँ फेरकर रुसवा ज़माने में न हो ।
दिल लगा तुमसे है आलम को ख़बर बाक़ी नहीं ॥

१७ ग़ज़ल

की थी उल्फ़त आपसे दिल के मिलाने के लिये।
बेवफ़ाई की ज़रा सूरत दिखाने के लिये॥
दम में दम जब तक रहेगा ढूंढ़ लेंगे हम तुम्हें।
कोशिशें बेकार हैं सब मुँह छुपाने के लिये॥
हमने सीधा जानकर तुमसे लगाया दिल को था।
तुम तो पीछे पड़ गए दिल आज़माने के लिये॥
पहले अपनी ले ख़बर लाज़िम है यह इन्सान को।
फ़िक्र है किस वास्ते सारे ज़माने के लिये॥
जो हुनरवर हैं हुनर करते हैं वह मशहूरे आम।
आपको क्यों उज़्र है वंशी सुनाने के लिये॥
'धर्म' की उम्मेद बर आए न जाने कौन दिन।
आरज़ू है आपको दिल में बिठाने के लिये॥

१८ ग़ज़ल

दिया था हमने दिल तुमको बताओ जबरिया क्योंकर।
अगर हमसे हुई ग़लती तो फिर तुमने लिया क्योंकर॥
तड़पते हम पड़े खंजर के मारे थे ज़माने में।

जिगर के घाव को फिर आके तुमने था सिया क्योंकर ॥
यह माना है ख़ता मेरी तुम इस दिल में नहीं आए।
मेरा दिल थाम कर ख़ुद सब्र फिर मुझको दिया क्योंकर ॥
है नादिम 'धर्म' ख़िदमत कुछ तुम्हारी कर नहीं सकती।
बहुत एहसाँ हुए सर पर अदा हो शुक्रिया क्योंकर ॥

१६ भजन (राग भैरवी)

बोलो बोलो रे कन्हाई कहूँ शीश नवाई।
श्यामसुँदर ब्रजराज मुरारी।
तन मन से हूँ शरण तिहारी ॥
बेगि कहो अब आय श्यामले।
कब हरिहो कठिनाई ॥ बोलो० ॥
मुझसी नाथ बहुत हैं नैया।
नाहीं तुमसा मोहिं खेवैया ॥
पार करो गहि बाँह मनोहर।
नहीं जात उतराई ॥ बोलो० ॥
निशि दिन बिनती करत तुम्हारी।

मुरलीधर मोहन गिरिधारी ॥
गिरि सा भार मेरा नँदनंदन।
लीजै बेगि उठाई ॥ बोलो॰ ॥

२० भजन

मैं तो शरण तुम्हारी रे साँवरे श्याम। तुम बिन नाथ कोई नाहिं दरसत। खोज खोज मैं हारी रे ॥ साँवरे॰ ॥ नाहिं शोच मोहिं अपने भरम को। जायेगी लाज तुम्हारी रे ॥ साँवरे॰ ॥ दर्शन दीजे हरि नारायन। कृष्ण भक्त भयहारी रे ॥ साँवरे॰ ॥

२१ भजन

सीता अति दुख पायो री करिके विलाप। जब से तजी मोरी खबरि न लीन्ही ना कोई दूत पठायो री। करके विलाप ॥

शेर

जिगर को आतिशे फ़ुरक़त में ग़म जलाता है।
कि आके राम मेरे दिल को लौट जाता है ॥
तड़प के जान निकल जाय दिल को भाता है।

न दम निकलता है दिल को न सब्र आता है ॥
सीता अति दुख पायो री करके विलाप।
फ़लक से आग जो माँगूँ तो वह घुड़कता है॥
कोई दिखाता है आँख और कोई झिड़कता है।
बग़ैर प्राणपतीजी के अपने है ख़्वारी ॥
कि जिनका नाम सुने शत्रु भी भड़कता है।
सीता अति दुख पायो री करके विलाप ॥

२२ ग़ज़ल

दिल तड़पता है तुम्हारी याद में।
भक्ति दे दीजे मुझे परशाद में ॥
इस मुसीबत से रिहा कर दो मुझे।
गर असर हो कुछ मेरी फ़रियाद में ॥
क़त्ल करता किस लिये मुझको नहीं।
रहम पिन्हा है दिले जल्लाद में ॥
माधुरी छवि से हों दर्शन 'धर्म' को।

जलवा दिखला दे दिले नाशाद में ॥

२३ ग़ज़ल

बन में रघुवर से छुटी है ये मुसीबत कैसी।
राम रखते थे मेरी दिल में मुहब्बत कैसी ॥
कर दे लंकेश मुझे क़त्ल इन्हीं हाथों से।
सख़्त दिल हूं मैं ये करता है इनायत कैसी ॥
प्यारे देवर की ज़रा मैंने नसीहत न सुनी।
कर गये थे सिरी लछमनजी हिफ़ाज़त कैसी ॥
सास ने की मेरी रुख़सत थी बड़े रंज के साथ।
आई जब बनको तो रँग लाई है क़िस्मत कैसी ॥
बोला रावण कि नहीं सुनता मैं तेरी फ़रियाद।
साथ चलने में मेरे तुझको यह हुज्जत कैसी ॥
जानकी बोली वह नीचा तुझे दिखलाएँगे।
सिरी भगवान से रखता है कुदूरत कैसी ॥
मुझको तू लाके यहाँ चाहता है खैर अपनी।
जानता तू नहीं है राम की अज़मत कैसी ॥

कह गए थे सिरी बजरंग हरि आएँगे ज़रूर।
कर रहे हैं मेरे परमात्मा मुद्दत कैसी॥
छोड़ा रघुनाथ ने मैं हाय कहां को जाऊँ।
कुछ समझ में नहीं आता करूँ भगवत कैसी॥
है ज़बाँ हरि ने जो दी 'धर्म' उसी का लो नाम।
नाम भगवत का न हो जिसमें इबादत कैसी॥

२४ ग़ज़ल

इतनी दया हो मुझपर ऐ श्यामले विहारी।
जब जान तन से जाए हरगिज़ न हूँ दुखारी॥
अति दुष्ट मेरा मन है औगुन-भरा यह तन है।
सब पाप नाश पाएँ किरपा हो गर तुम्हारी॥
पापी हूँ गर तुम्हारी धरमात्मा तुम्हारी।
है भार मेरा भारी तुम पर हरी मुरारी॥
जब साँस आख़िरी हो जै कृष्ण हो ज़बाँ पर।
नज़रों के सामने भी मूरति फिरे तुम्हारी॥
सिर पर मुकुट हो कुंडल कानों में लब पै वंशी।

चारो भुजा में प्यारे हो शंख-चक्र-धारी ॥
दर्शन तुम्हारे करके चाहे जहाँ मैं जाऊँ।
हर तन में श्यामसुंदर लेना ख़बर हमारी ॥
आने न देना यम को लीजै शरण में हमको।
रखना 'धरम' को मेरे लज्जा तुम्हें हमारी ॥

२५ ग़ज़ल

इनायत ख़ातिरे नाशाद पर हरबार करते हो।
तलबगारों की पूरी हसरते दीदार करते हो ॥
है अपने दम में दम जबतक रहेगी जुस्तजू जारी।
बहुत छुप छुपके परदा हमसे तुम बेकार करते हो ॥
किसी गुलशन को वीराना बना देते हो दम-भर में।
किसी वीराने को एक आन में गुलज़ार करते हो ॥
मिलेगा तुमको क्या अब क़ब्र पर आँसू बहाने से।
निकल जाने पै दम क्यों ख़ातिरे बीमार करते हो ॥
बता दो 'धर्म' को भी नाम उन दो चार भक्तों के।
मए उल्फ़त से जिनके दिल को तुम सरशार करते हो ॥

२६ भजन

यतन करो प्यारी मोहन मिलूँ जाय। मोहन मिलूँ जाय चरन गिरूँ धाय॥ और कछू मोहिं दरसत नाहीं, सखीरी गयो नैनन में श्यामला समाय॥ घर के काम में मन नाहिं लागत, सखीरी लियो मोहन ने मन को चुराय॥ तन मन मेरो कियो बस अपने, सखीरी वंशीवाले ने बाँसुरी सुनाय॥ शरण भई अब दीन 'धरम' को, मोहन मोहिं दीजै दरश दिखलाय॥

२७ ग़ज़ल

ऊधो तुम्हारी बातें यों ही सुना करेंगे।
दिल में सगुन रमा है निरगुन को क्या करेंगे॥
दिल एक था वह हरि के चरनों में रम गया है।
निरगुन के वास्ते क्या दिल दूसरा करेंगे॥
हैं देखना करश्मे कुछ आपके चमन में।
वीरान हो चुका है क्योंकर हरा करेंगे॥
कहना यह जाके हरि से एहसाँ बहुत हैं सर पर।

हम शुक्रिया तुम्हारा क्योंकर अदा करेंगे ॥
आई हूँ बाज़ ऊधो मैं ज्ञान सीखने से ।
जब होगी उनकी मरज़ी ख़ुद ही दया करेंगे ॥
मिलते नहीं 'धरम' से फिरते हो मुँह छुपाए ।
अब और इल्तिजा क्या इसके सिवा करेंगे ॥

२८ ग़ज़ल

सीताराम और लखन अपने वतन से छूटे ।
प्राण दशरथ के इसी रंज में तन से छूटे ॥
छूटते पुत्र हैं इस तरह यह कौशल्या से ।
जिस तरह बच्चा कोई गाय के थन से छूटे ॥
किस ज़बाँ से हो बयाँ मुझसे भरतजी का ग़म ।
रामसीता न मिले भाई लखन से छूटे ॥
जब गए वन को तो रावण ने हरी वैदेही ।
यह मुसीबत है कि वन जाके दुलहन से छूटे ॥
हद को पहुँचे न मुसीबत तो मुसीबत कैसी ।
राजा नल जैसे मुसीबत में दमन से छूटे ॥

साथ देता नहीं मुशकिल में किसी का कोई।
आँख से अश्क पसीना भी बदन से छूटे॥
कुछ मुझे खौफ़ नहीं छोड़ दे चाहे कोई।
मन न लेकिन ये मेरा सीतारमण से छूटे॥
जो दिया राम ने दम भर न जुदा हो मुझसे।
हो इनायत जो यह जीव आवागमन से छूटे॥
मेरा जीना ही है बेकार जो हरि ने छोड़ा।
ज़िंदगी साँप की क्योंकर हो जो मणि से छूटे॥
सब्र है मुझको जो हरि को है जुदाई मंजूर।
ध्यान लेकिन न मेरा हरि के चरन से छूटे॥
फिर सुना अब तो 'धरम' को वह मनोहर बानी।
बाँसुरी हाँ न कभी तेरे दहन से छूटे॥

२९ ग़ज़ल

तुमसे क्या काम मेरी जान रहे या न रहे।
हम जुदाई में परेशान रहे या न रहे॥
कुछ नहीं वास्ता इस बाग़ से जहाँ से मुझको।

चाहे गुलशन हो या वीरान रहे या न रहे ॥
चाहिए चार भुजाओं का भरोसा मुझको ।
मेहरबाँ फिर कोई इंसान रहे या न रहे ॥
जन्म इंसान का लेकर न हों दरशन तेरे ।
ज़िंदगी भर यहाँ हैरान रहे या न रहे ॥
बोलता दिल है सिरी कृष्ण मिलेंगे तुझको ।
देखना है मेरा अरमान रहे या न रहे ॥
'धर्म' के दिल में फ़क़त मोहिनी मूरत दिखला ।
मुझको परलोक का फिर ध्यान रहे या न रहे ॥

३० ग़ज़ल

कृष्ण की भक्ती का मैं दिल से तलबगारों में हूँ ।
दीजिए जल्दी कि मैं बेज़र खरीदारों में हूँ ॥
लीजिए अपनी शरण में अब मुझे किरपानिधान ।
बनके संगे आस्ताँ मंदिर के रखवारों में हूँ ॥
मेरे दर्दे हिज्र की मुझको दवा देगा वही ।
वह है चारा गर मेरा मैं उसके बीमारों में हूँ ॥

क्या करूँ वह बाँसुरीवाला मुझे मिलता नहीं ।
मैं उसीके दामे उल्फ़त के गिरफ़्तारों में हूँ ॥
'धर्म' का क़ासिद उन्हें यों जाके बतलाना पता ।
जो है राधाजी का प्यारा उसके मैं प्यारों में हूँ ॥

३१ ग़ज़ल

पयाम हरि को मेरा जाके यह सुना देना ।
हमारे दिल की मुहब्बत उन्हें जता देना ॥
पड़े हैं छाले जिगर में तुम्हारी फ़ुरक़त से ।
दिया है घाव तो मरहम तुम्हीं लगा देना ॥
न करना दस्त निगर अब हमें अज़ीज़ों का ।
हमारी बात को हरदम तुम्हीं निभा देना ॥
हमें तो वास्ता हरदम है श्यामसुंदर से ।
यह ज्ञान अपना किसी और को सुना देना ॥
न फ़िक्र योग की मुझको न मुक्ति की परवा ।
'धरम' को दरश ज़रा अपना तुम दिखा देना ॥

३२ ग़ज़ल

हमसे अब कबतक रहेगी बेवफ़ाई आपकी।
क्यों नहीं देती ज़रा सूरत दिखाई आपकी॥
चार आँखें हो गईं मुँह से न कुछ बोले ज़रा।
आज ही तो खूब उल्फ़त आजमाई आपकी॥
हाथ यों पकड़ूँ न छूटे हाथ से मेरे कभी।
रहम कहता है कि है नाज़ुक कलाई आपकी॥
साँस तक की भी हुई बँद आज आमद रफ़्त है।
साँवली सूरत है इस दिल में समाई आपकी॥
दस्त बस्ता अर्ज़ है दर्शन मिले अब 'धर्म' को।
है सही जाती नहीं अब तो जुदाई आपकी॥

३३ ग़ज़ल

प्रीति को किस तरह नँदलाल छिपाएँ तेरी।
याद आती हैं वो बंशी की सदाएँ तेरी॥
एक नामा भी तो भेजा न मदनमोहन ने।
याद हम कौन बहाने से भुलाएँ तेरी॥

तू बिगड़ता है नहीं सामने आता मेरे।
हम लिया करते हैं सौ दिल से बलाएँ तेरी॥
'धर्म' से मोहिनी मूरत को छुपा रक्खा है।
प्रीति हम कौन तरीक़े से लगाएँ तेरी॥

३४ ग़ज़ल

मन रम गया है मेरा भगवान के चरन में।
किरपानिधान अब तो ले लीजिये शरन में॥
सदमें उठाऊँ कबतक ऊधो विरह में हरि के।
एक जान सिर्फ़ मेरे बाक़ी रही है तन में॥
है सब्र 'धर्म' को जो होना था हो गया सब।
कट जाए मेरा जीवन श्रीकृष्ण के भजन में॥

३५ ग़ज़ल

हाल क्योंकर करूँ अयाँ दिल के।
कोई सुनता नहीं बयाँ दिल के॥
रोज़ की सुहबतों का ज़िक्र नहीं।
एक दिन तो हो मेहमाँ दिल के॥

गुलशने दिल पड़ा है मुरझाया ।
हुए वीरान सब मकाँ दिल के ॥
बेगुनह दिल पै रहम कर बुलबुल ।
तू न अब छोड़ आसियाँ दिल के ॥
ज़ुल्म सहने की मुझमें ताब नहीं ।
अब तो हो जाओ क़द्रदाँ दिल के ॥
छोड़े आलम मुझे नहीं परवा ।
हों श्रीकृष्ण मेहरबाँ दिल के ॥
हो रिहाई मुझे ज़माने से ।
निकलें अरमान बेगुमाँ दिल के ॥
'धर्म' की आह आप सुनते नहीं ।
मैं कहूँ राज़ फिर कहाँ दिल के ॥

३६ बारहमासा

श्याम बिन चैन नहीं आती, लिखूँ मैं कौने विधि पाती ।
असाढ़ हरि त्याग दिया मुझको ।
शरण में नहीं लिया मुझको ॥

न जाने कौन हुआ अपराध ।
चरण से जुदा किया मुझको ॥
ग़म की बदरी छा रही, आँसुन पड़त फुहार ।
गरज गरज बदरा सम धड़कै, जियरा बारंबार ॥
सखी भई पृथ्वी सम छाती । लिखूँ मैं० ॥
पड़े सावन घर घर झूले ।
श्याम हमको बिलकुल भूले ॥
किया गोकुल को वीराना ।
कमल अब मथुरा में फूले ॥
डोरी लागी प्रेम की, घट को पटरा डार ।
मन को झूक बढ़ाय के, कृष्ण की गाय मलार ॥
काम हमको यह दिन राती । लिखूँ मैं० ॥
भरे भादों जल थल तालाव ।
अरे भौंरा तुम हरि पै जाव ॥
कहो हरि से मत देर लगाव ।
पड़ी मँझधार हमारी नाव ॥

डूबत अरु उतरात है, केहि विधि राखूँ प्रान।
कौन पार तुम बिन करै, दीनबंधु भगवान॥
नहीं है कोई संघाती। लिखूँ मैं० ॥

क्वाँर में ऊधो पहुँचे आन।
हमारे तन में आए प्रान॥
मेरा देखे कोई अज्ञान।
मैं जाना आए श्रीभगवान॥

वेश देख व्याकुल भई, वृंदावन की नार।
तन मन की सुधि ना रही, आए प्रान अधार॥
देख ऊधो को पछतातीं। लिखूँ मैं० ॥

सिखावन लगे ज्ञान कातिक।
भए ऊधो जियके घातिक॥
विकल मैं बिन दर्शन ऐसी।
कि ज्यों स्वाती के बिन चातिक॥

ऊधो तुम्हरे ज्ञान का, मैं मानन की नाउँ।
तन मन में रम रहे मुरारी, कौन यतन बिसराउँ॥

मैं मोहन के रँग में राती। लिखूँ मैं० ॥

दीन्ह ऊधो अगहन पाती।
सखी सब ले ले हरषाती॥
जान मनभावन की भेजी।
लगावें अँखियन अरु छाती॥

पत्री लै अति प्रेम सों, कहें सभी व्रज-बाल।
प्रीति सबन से करत हैं, निठुर नहीं नँदलाल॥
बहुत जिय में सब हरषाती। लिखूँ मैं० ॥

पूस में पत्री देखी खोल।
लिखे थे उसमें दो ही बोल॥
ब्रह्म निर्गुण को तुम मानो।
जो है सबसे बढ़कर अनमोल॥

निराकार को मानके, हमको समझो पास।
डाल डाल अरु पात पात में, देखो मेरा वास॥
न जानो हमको सँग साथी। लिखूँ मैं० ॥

माघ में विकल भई नारी।

देख मोहन की हुशियारी ॥
कहूँ किससे मैं दुख भारी ।
निठुर भए अब तो बनवारी ॥
चित लैके चेतत नहीं, वह सजनी चित चोर ।
कहाँ जाय ढूँढूं तुम्हें, जसुदा नंदकिशोर ॥
नहीं बिदरत अजहूँ छाती । लिखूँ मैं० ॥
लगा फागुन अब तो गोरी ।
श्याम कुबजा खेलें होरी ॥
भरे हमहूँ दुख की झोरी ।
रहीं मन ही मन में घोरी ॥
नंद-नँदन की प्रीति को, रंग भयो गुलनार ।
भर पिचकारी प्रेम की, निशि दिन चलत फुहार ॥
प्रेम से प्रीतम नहलाती । लिखूँ मैं० ॥
चैत में लागी है पतझार ।
बिलग भई पात पात से डार ॥
अहो दुखभंजन नंदकुमार ।

हरो अब मेरो दुःख अपार ॥
दीनबंधु करुणायतन, नंदनँदन यदुराय ।
मैं तो तुम्हरी शरन हूँ, अब काहे बिसराय ॥
मुसीबत सही नहीं जाती । लिखूँ मैं० ॥
लगा बैशाख दरश-प्यासी ।
यहाँ तो थे प्रभु सुखरासी ॥
भई बैरिन कुब्जा दासी ।
योग मोहिं भेज्यो अविनाशी ॥
गल बिच सेली डालके, मुद्रा पहनूँ कान ।
केश खोल वन वन फिरूँ, रटूँ सिरी भगवान ॥
ये कुब्जा हरि को सिखलाती । लिखूँ मैं० ॥
जेठ गोपिन की चतुराई ।
देख ऊधो-मति भरमाई ॥
जोड़ कर चरणन शिर नाई ।
धन्य तुम्हरे पितु अरु माई ॥
सफल जन्म तुम्हरो भयो, हरि से नेह लगाय ।

ऊधो मथुरा को गए, अपनो ज्ञान भुलाय ॥
धन्य व्रजगोपिन की जाती। लिखूँ मैं० ॥

लौंद अब आवे जेहि काला।
दरश दें हमको नँदलाला ॥
रहत नित हम पर किरपाला।
मेरा वह मोर मुकुटवाला ॥

देह 'धरम' मथुरा बने, हिरदै तुम्हरो ग्राम।
आठ पहर चौंसठ घड़ी, बसिए राधेश्याम ॥
तुम्हारा निशि दिन गुण गाती। लिखूँ मैं कौने विधि पाती। श्याम बिन चैन नहीं आती ॥

३७ चौमासा

किया नहिं प्रभुजी से नाता।
नहीं कोइ मन को समझाता ॥
भयो जब जन्म मनुज तन में।
बहुत दुख पाए शिशुपन में ॥
बयस अब आई लड़काई।

गँवाई खेल कूद माहीं ॥
बालापन की विद्या, रहत जन्म भर पास ।
शिक्षा होती भक्ति की, दिन दिन बढ़त प्रकास ॥
व्यर्थ क्यों जन्म मेरा जाता । नहीं कोइ ० ॥
युवा अब दुसरा पन आया ।
मोह माया ने भटकाया ॥
जगत की यह देखो माया ।
प्रभू को दिन दिन बिसराया ॥
माया में यों फँस गए, ज्यों लुटिया अरु डोर ।
अपना गला फँसाय के, लावे पानी बोर ॥
फिरे जग दिन दिन भरमाता । नहीं कोइ० ॥
वृद्धपन अब तो पहुँचा आन ।
फँसी हरएक वस्तु में जान ॥
बढ़ा अब कैसा है अज्ञान ।
नथी प्रभुजी से कुछ पहचान ॥
मरन तरन की सुध नहीं, जानत घर संसार ।

नेह बढ़ायो सुतन सों, भूले सिरजनहार ॥
पुत्र फिर काम नहीं आता। नहीं कोइ० ॥

आय जब अंत समय गासा।
लगे यम देन बहुत त्रासा ॥
न की तबहूँ हरि की आसा।
मनुष तन का यह चौमासा ॥

भरतखंड के बीच में, मानुष को तन पाय।
प्रभुका सुमिरन ना कियो, होते आन सहाय ॥
कहो अब काहे पछताता। नहीं कोइ० ॥

डरूँ मैं अब अपनी बारी।
महा मतिमंद अधम नारी ॥
विनय निशि दिन है गिरिधारी।
खबर लें मेरी बनवारी ॥

'धरम' कहत कर जोड़ के, पूरन कीजै आस।
हिरदै में देखूँ सदा, राधाकृष्ण निवास ॥
चरण-रज दीजै सुखदाता। नहीं कोइ० ॥

३८ ग़ज़ल

ऊधो जिस दिन से गए पत्री न आई श्याम की ।
योग में हूँ ठोकरें खाती उन्हीं के ग्राम की ॥
उनकी गुज़रे चैन से उनको हमारी क्या खबर ।
दिल तड़पजाता है जब याद आती है घनश्याम की ॥
इतनी निठुराई उन्हें हरगिज़ न करना चाहिए ।
सिदक़े दिल से उनकी इक चेरी हूँ मैं बेदाम की ॥
गर न दर्शन राधिकावर श्याम के मुझको मिलें ।
जन्म है किस काम का अरु ज़िंदगी किस काम की ॥
रंग क़िस्मत का जो देखा दिल हटा संसार से ।
पाई सूरत एक दम भी याँ नहीं आराम की ॥
ज़िंदगी का लुत्फ़ हासिल कर ज़बाँ से 'धर्म' अब ।
जय हो राधाकृष्ण की जय होय सीताराम की ॥

३६ ग़ज़ल

दीजै दर्शन मुझे बंशी के बजानेवाले ।
नाज़ वृषभान दुलारी के उठानेवाले ॥

चल दिए किस लिये गोकुल मेरा सूना करके।
लोक परलोक का नज़्ज़ारा दिखानेवाले॥
याद प्यारे मेरी दिल से न भुलाना हरगिज़।
उफ़ तड़पते हुए यों छोड़के जानेवाले॥
तू मेरी उल्फ़ते बे लौस का शैदाई था।
दाद देते हैं सदा तेरी ज़मानेवाले॥
कृष्ण की भक्ति का यों 'धर्म' मैं चख लूँगी मज़ा।
गीत गा दीजिए कुछ दिल को लुभानेवाले॥

४० होली

होली भई दुखदाई, श्यामले ने मथुरा बसाई।
जब से गए मोरी सुधिहू न लीन्हीं, कैसी करूँ यदुराई।
का होनी थी काह भई है, विधि-गति जान न जाई।
करम में जो रेख खिंचाई॥ होली० १॥
राज होत बनबास देत जो, तिन सों काह बसाई।
गोकुल छोड़ बृन्दाबन छोड़ा, मथुरा मन को सुहाई।
मेरी क़िस्मत रँग लाई॥ होली० २॥

अबिर गुलाल भाँति सुख उड़ गयो, अब नहिं देत दिखाई।
नैनन की भर भर पिचकारी, आँसुन रंग चलाई।
श्याम पर धूनी रमाई ॥ होली० ३ ॥
कुछ दिन बीते सखी बिलखानी, ऊधो को दीन्हा पठाई।
हमरी बेर कोई नहिं आवत, नेक ख़बर नहिं पाई।
बिपति मोरी बरनि न जाई ॥ होली० ४ ॥
है संसार अगम भवसागर, पार होत कठिनाई।
बीच धार में बूड़ गई हूँ, ना जानूँ कित बह जाई।
नाथ अब करो सहाई ॥ होली० ५ ॥
कृष्णचंद आनंदकंदजी, बेगि हरो निठुराई।
'धरम' दरश हित बिनती करत है, माखनचोर कन्हाई।
देहु प्रभु वंशी सुनाई ॥ होली० ६ ॥

४१ होली

होली श्यामसुँदर सँग खेलूँ आज,
सँग जिनके रहत नित सुर-समाज।
माथे तिलक गले बैजंती, साजे रहत नटवर को साज ॥ हो०

सम्मुख अबिर गुलाललगाऊँ, छोड़ देउँ सब कुलकी लाज
नैननकी पिचकारी चलाऊँ, ठाढ़ेरहो तुम बिर्जराज॥ होली
मनमोहन के रँग में रँगी हूँ, और रंग मेरे कौने काज॥ होली
'धर्म' कहत नित दोउ करजोरे, हाथ तुम्हारे हमारी लाज॥

४२ होली

पत राखो बनवारी, तुम से बिनती करत है।
बिलखत तड़पत निशिदिन प्यारे, मारो न अब पिचकारी॥
अबिरा गुलाल से लाल भयो मुख, भीजि गई तन सारी॥
कौनि भाँति घर जाऊँ सखीरी, मग रोकत गिरिधारी॥ तुम
दीन 'धरम' से होली खेल के, राखिये लाज हमारी॥ तुम०

४३ होली

राखिए ब्रजराज लाज अब जात हमारी।
दुश्शासन मति भ्रष्ट भई है, खैंचत है मोरी सारी।
पाचों पति तो मौन हुए बैठे, तलफ़त देखत नारी।
करूँ कैसी बनवारी॥ राखिए० १॥
दुखभंजन कहँ द्रुपद-सुता जब, बारम्बार पुकारी।

चीर में प्रकट भए नँदनंदन, ढेर भयो अति भारी।
गए खल जन जिय हारी ॥ राखिए० २ ॥
या जग में कोई दर्शत नाहीं, अब मेरो हितकारी।
दीनबंधु प्रभु दीन 'धरम' के, तुम हो पत रखवारी।
सुनो अब कृष्ण मुरारी ॥ राखिए० ३ ॥

४४ ग़ज़ल

हे कृष्णचंद्र स्वामी तारन तरन तुम्हीं हो।
भक्तों के प्राणप्यारे तन और मन तुम्हीं हो ॥
पापी हज़ारों तारे, लाखों अधम उबारे।
हूँ मैं शरण तुम्हारी, पातक-हरन तुम्हीं हो ॥
तुम जानते हो सारा, जो हाल है हमारा।
काफ़ी है यह इशारा, निर्धन के धन तुम्हीं हो ॥
निशि दिन 'धरम' पुकारे, हो क्यों मुझे बिसारे।
इस जगत में हमारे, राधारमण तुम्हीं हो ॥

४५ भजन

[तर्ज़—चले सिय राम-लखन वन को]

अरे दुखभंजन नंदकुमार, विनय सुन लीजे वेग हमार।

दुखसागर के बीच में, पड़ी हमारी नाव।
तुम अनाथ के नाथ हो, अब मत देर लगाव ॥
करो कर गहकर मुझको पार ॥ विनय० १ ॥
देखा या संसार में, नहीं आपना कोय।
तुम बिन प्रभु या समय में, कोइ सहाय न होय ॥
करूँ तुमसे दिन-रात पुकार ॥ विनय० २ ॥
तन-मन से शरणागती, आई दोउ कर जोर।
पार करो तो पार हूँ, चहे दीजिये बोर ॥
धरो तुमहीं पर अपना भार ॥ विनय० ३ ॥
चरण-कमल हिरदै बसैं, निशि दिन आठों याम।
दर्शन की आशा 'धरम', करत सवेरे शाम ॥
सुनो हित चित से कृष्ण मुरार ॥ विनय० ४ ॥

४६ भजन ऐज़न

शरण प्रभुकी राखो मनको, जो है सुखदायक भक्तन को।
पड़के माया-जाल में, कोइ नाहिं पावत चैन।
यह निश्चय कर ले जिया, अजहुँ उघारो नैन ॥

न जानो तुम अपने तन को ॥ शरण० १ ॥

राम-कृष्ण के नाम को, माला सम उर धार।
छोड़ कपट जंजाल को, भज ले सिर्जनहार ॥
निछावर कर तन मन धन को ॥ शरण० २ ॥

दर्शत नहिं कोइ आपनो, खोजि फिरी सब ओर।
अब तो तुम्हरी शरण हूँ, यशुदा नंदकिशोर ॥
बिसारो जनि अपने जन को ॥ शरण० ३ ॥

चरण कमल की भक्ति को, चाहत निशिदिन 'धर्म'।
दर्शन दीजिय करि कृपा, रखिए मेरा मर्म ॥
सुनाऊँ बिनती मोहन को ॥ शरण० ४ ॥

४७ लावनी

मोहिं तजि प्रभु गए निज भवन छलावा दैके।
ना जानूँ कित भाजि गए भुलावा दैके ॥
हमको थी सुख की आस दुःख प्रभु दीना।
नहिं जानूँ विधाता कहा करम लिख दीना ॥
अति सुंदर हरि को पाय मैं नहीं चीन्हा।

जस चीन्हा सोई हमें विधाता दीन्हा ॥
मैं ना जानूँ लै लेहैं विधाता दैके ॥ मोहिं० १ ॥
तिरियन के सँग प्रभु जन्म छलावा कीन्हा ।
सीता को दै वनवास त्रास बहु दीन्हा ॥
राधा-सँग रास-विलास सबै कुछ कीन्हा ।
कुछ दिन रहे कुबरी पास उन्हें सुख दीन्हा ॥
प्रभु हुआँ रहा ना गवा हुआँ से बहके ॥ मोहिं० २ ॥
अब मैं जाना मेरा जन्म दुःख सहने को ।
जो दिया विधाता मोहिं नहीं कहने को ॥
अब देखो श्रीभगवान मेरे लहने को ।
नदिया नहिं देती ठौर मुझे बहने को ॥
संगिन साथिन तज दिया सहारा दैके ॥ मोहिं० ३ ॥
अब नाथ गहो तुम हाथ पार मैं जाऊँ ।
जो शिवजी भोलानाथ सहारा पाऊँ ॥
कह दोउ कर जोरे 'धरम' चरण शिर नाऊँ ।
तुम बिन प्रभु अपनी बिथा मैं किसे सुनाऊँ ॥

कटि जाय जन्म अब नाम तुम्हारा लैके ॥ मोहिं० ४ ॥

४८ लावनी

शरणागत तुम्हरी रहूँ चतुर्भुजधारी ।
दुइ कर की चाहत नहीं नेक रखवारी ॥
जब द्रुपद-सुता को आय बिपत ने घेरी ।
पाचों पति कर नहिं सके बिपति निर्बेरी ॥
तब 'दीनबंधु भगवान कृष्ण' कह टेरी ।
रक्षा कर चीर बढ़ाय लगाई ढेरी ॥
दीनन-हित लीला कीन्ह अमित बनवारी ॥ शरणा० १ ॥
मीरा-हित कीन्हीं बहुत नाथ प्रभुताई ।
मम सुनत नहीं हो टेर कहूँ बिलखाई ॥
हे नाथ बिपति अति घनी बरनि नहिं जाई ।
काहे ब्रजराज गोपाल हमें बिसराई ॥
अब मेरा कर गहि लेहु आय गिरिधारी ॥ शरणा० १ ॥
यह जन्म बिपति के हेत नाथ मैं जाना ।
करनी जस कीन्हीं भई, कौन पछताना ॥

तुम देखो लहना मोर कृष्ण भगवाना ।
माँगु तुमसे हर बार मिले नहिं ज्ञाना ॥
तुम शरण छोड़ कितजाउँ बिपत की मारी ॥ शरण० ४
हे कृष्णचंद्र महाराज सुनो अब टेरी ।
ब्रजनाथ तुम्हारे हाथ लाज है मेरी ॥
भक्ती हित बिनती करत भई मोहिं देरी ।
दर्शन दीजे अब 'धर्म' जान चित चेरी ॥
हे कृष्णचंद्र महारज भक्त-हितकारी ॥ शरण० ५ ॥

४६ होली

औरनसे कुछकाज नहीं, मैंतो तुमहींसेप्रीतिलगायरही ।
प्रेमको रंगभरो नैनन में, निशिदिन मन को रँगायरही ।
तुम्हरे दरशहित मोहनप्यारे, तनमनसगरो जलायरही ॥
मानो या प्रभु मेरी न मानो, तुमही पै धूनी रमाय रही ।
'धरम' चरण परहै बलिहारी, मनमोहनको मनायरही ॥

५० होली

शरणागत हूँ हे दुखभंजन, राखिये लाज हमारी रे ।

मैं जमुना जल भरन जात थी, मग रोके गिरिधारी रे।
अबिर गुलाल लिये कर दोऊ, रँग से भिगोवत सारी रे॥
छूट गईं सब सँग की सखियाँ, मैं व्याकुल भइ भारी रे।
दीनानाथ कहो कित जाऊँ, अब तो शरण तिहारी रे॥
तुम बिन और मिलो नहिं मोहन, ढूँढ़त ढूँढ़त हारी रे।
या जग में अब कोइ न दरशत, हमरी पत रखवारी रे॥

५१ भजन (जोगिया)

नाहीं सही जात प्रभु आनके उबारो।
गहरी नदिया अगम बहत है, नाव फँसी मँझधारो।
खेवनहार कोई नहिं दरशात, अब तो नाथ मोहिं तुम्हरो सहारो॥ नाहीं०॥ गज की टेर सुनी रघुनंदन, प्रभु निज हाथ उबारो। हमरी बेर सुनत नहिं स्वामी, नाथ कहा तुम करत विचारो॥ नाहीं०॥ शरण राख प्रहलाद भक्त को, सभी कलेश निवारो। पदवी परम दीन्ह गणिका को, काहे मोहिं प्रभु निपट बिसारो॥ नाहीं०॥ मैं अति दीन कहो कित जाऊँ, है अब तुम्हरो सहारो।

अबला नाथ पतित-पावन हो, दीनानाथ सों नाम तुम्हारो ॥ नाहीं० ॥ रमानिवास आस है तुम्हरी, बोरो नाथ चाहे तारो। शंख चक्र को धारण करके, बाँह गहो मेरी पार उतारो ॥ नाहीं० ॥ यह संसार असार समझ मन, कोइ नहिं काहू का रे। सार जान भगवंत भक्ति को, सोच 'धरम' अब नयन उघारो ॥ नाहीं० ॥

५२ भजन (जोगिया)

मन मूरख काहे प्रभु बिसरायो।
मात पिता अति हित सों राखो, उनसों नेह बढ़ायो। प्रीति की रीति तानिक नहिं मानी, सब मिलि हँस हँस अंत पठायो॥ मन० ॥ मात पिता सों करि निठुराई, पति सों नेह लगायो। महा अधम मन समझत नाहीं, सोई पति जब फंद छुड़ायो ॥ मन० ॥ संग संबंधिन को अपनो करि, हित सों प्रेम बढ़ायो। अधम निलज्ज लाज नहिं तोको, मित्रन हू जब नेह घटायो॥ मन० ॥ आपन

कर निज सुत को जान्यो, सुवना भाँति पढ़ायो। चतुर भये पंडित ह्वै बैठे, तब माता कहँ आँख दिखायो॥ मन०॥ महा मंद मन समझत नाहीं, अधिक-अधिक भरमायो। समय पड़े कोई काम न आवत, अब मूरख काहे पछ-तायो॥ मन०॥ दीनबंधु प्रभु जन सुखदायक, दीना-नाथ कहायो। कृष्णचंद्र यों 'धरम' कहत है, काहे को प्रभु मोहिं भुलायो॥ मन०॥

५३ भजन (जोगिया)

कृष्ण हरी शरणागत आई।
मैं अनजान कछू नहिं जानूँ, प्रभु कीन्हीं चतुराई।
ऊधोकर मोहिं योगपठायो, देखो सखी हरिकी निठुराई॥
तुम्हारी बिछुड़न मोहनप्यारे, कछु बरनी नहिं जाई।
ज्योंज्यों बीते बैसहमारी, त्योंत्यों बिपतिअधिकगरुआई॥
मन मूरख अजहूँ नहिं चेतत, फिर फिर करत मिताई।
जापर रहत भरोसा अपना, वहीजात जब पीठ दिखाई॥
अब सुधि लेहु मेरी नँदनंदन, बहुत सही कठिनाई।

मित्रन सहित बेगि अब मिलिए, आन 'धरम' से कुँवर कन्हाई ॥ कृष्ण० ॥

५४ भजन (जोगिया)

मन मूरख काहे समझत नाहीं ।
पुत्र होत नित प्रतिदिन बाढ़त, मात पिता हरखाहीं । ऐसो महामंद यह मन है, घटत आयु जन जानत नाहीं ॥ मन० ॥ करम धरम सब त्याग कियो है, सुत की ममता माहीं । सो सुत चलन सबेरेहि ठान्यो, अंत समय कुछ काम न आहीं ॥ मन० ॥ पति सों नेह कियो हित चित सों, मात पिता बिसराई । है यह जगत फंद सब झूठो, पति के सँग जब प्राण न जाहीं ॥ मन० ॥ सब तजि भक्ति करो भगवत की, सत्य जान मनमाहीं । ब्रह्मरूप सब जग को जानो, देख 'धरम' नेकहु दुख नाहीं ॥ मन० ॥

५५ लावनी

रख लीजै दीनदयाल शरण मैं आई ।

नँदनंदन काहे दियो निपट बिसराई ॥
नहिं मिलत आपनो कोई खोज मैं हारी ।
निज भार तुम्हारे माथ धरो बनवारी ॥
सुधि लेव चहे बिसराओ हमारी बारी ।
कुछ भरम नहीं मोहिं जायगी लाज तुम्हारी ॥
तुम्हरे चरणन की ठौर मेरे मन भाई ॥ रख० ॥
मैं छोड़ तुम्हारा द्वार रहूँ किस घर में ।
दुखभंजन मेरा कोई नहीं जग भर में ॥
मन में नहिं भक्ति प्रकाश धन नहीं करमें ।
सब तजके आश लगाइ राधिकावर में ॥
हरिहैं सब संकट मेरे वह जनसुखदाई ॥ रख० ॥
हट गयो नीर मैं पड़ी नाव झांझर में ।
नयनन को जल नाहिं भरत भरे गागर में ॥
मिलजाय शरण की ठौर जो नटनागर में ।
बह जाऊँ तो मैं नाथ क्षीरसागर में ॥
निज नयनन देखूँ रमाकंत को जाई ॥ रख० ॥

हूँ कृष्णचन्द्र महराज चरण की दासी ।
रख लीजे शरणागती मोहिं अविनासी ॥
है 'धरम' दरश की बहुत दिनन से प्यासी ।
करो पूरी आस है गले प्रेम की फाँसी ॥
कहूँ दोउ कर जोड़े शीश चरण पर नाई ॥ रख० ॥

५६. लावनी

तुम हो अनाथ के नाथ हाथ गहो मेरो ।
नहिं आवत कोई दृष्टि बहुत मैं हेरो ॥
जब जग दुखसागर भयो बिपत अधिकाई ।
सुन दुखभंजन अस नाम शरण मैं आई ॥
तुम हो प्रभु दीनदयाल जगत सुखदाई ।
कहिं और शरण तुव छोड़ ठौर नहिं पाई ॥
हे दीनबंधु अब दयादृष्टि से हेरो ॥ तुम० ॥
दुख हरो सुदामा केर तुम्हीं बनवारी ।
निर्धन के धन तुम रहत सदा गिरिधारी ॥
तुम कृपा करी बढ़ गई द्रौपदी-सारी ।

अब पड़ी कृपानिधि आय हमारी बारी ॥
अब करो 'धरम' के हृदय आय प्रभु डेरो ॥ तुम० ॥

५७ भजन (जोगिया)

सियापति राम मैं तो तुम्हरे सहारे।
तुम दीनन के नाथ कहाओ, दुख के टारनहारे।
हूँ अनाथ रघुनाथ खबर लेव, दीनबंधु अब तुम्हीं हो हमारे ॥ सिया० ॥ तुमसा मोहिं कोई नहिं दरशात, हमसे बहुत तुम्हारे। इस जीवन के जीवन हो प्रभु, प्राणनाथ प्राणन के प्यारे ॥ सिया० ॥ सुरनायक संसार सहायक, वेद ही वेद पुकारे। करत रहत प्रति-पाल जगत को, अतिशय करुणा उर बिच धारे ॥ सिया० ॥ दुखसागर से पार करनको, हो तुम खेवन-हारे। हाथ धरो मम सीस सियावर, बाँह गहो मेरी करो किनारे ॥ सिया० ॥ नेक सुनो अब दीन 'धरम' की, रघुकुल के उजियारे। कर कमलन में धनुष बाण ले, देहु दरश दशरथ के दुलारे ॥ सिया० ॥

५८ भजन (जोगिया)

तज सब काम मन राम को अधारो।
दुनिया दौलत माल खज़ाना, है झूठो संसारो। मात पिता और भाई भतीजे, इन सब से मन कर लेओ न्यारो ॥ तज० ॥ सँग संबंधिन छोड़ दियो है, तब मन माहिं विचारो। बिना राम कोइ काम न आवत, सोच देख मन नयन उघारो ॥ तज० ॥ अंत समय कोई साथ न जइहै, करिहैं सभी किनारो। रोय रोय के बहु दुख देहैं, झूठा दिखाव करत संसारो ॥ तज० ॥ त्रिया कहत हम साथहि चलिबे, जन्म संघाती हमारे। अंत समय मुँह फेर के बैठत, लोग कहैं यह शत्रु तुम्हारो ॥ तज० ॥ मूरख 'धर्म' अबहुँ तुम चेतो, कोई नहिं काहू का रे। रमानिवास आस है तुम्हरी, बाँह गहो मेरी पार उतारो ॥ तज० ॥

५९ ग़ज़ल

अब तुम्हारा चित्र अपने दिल में हम खिचवायँगे।

पास अपने इस तरह हम खींचकर ले आयँगे ॥
अब भी जो दर्शन न दो तुम मेरे मालिक हो ज़ुरूर।
अपनी क़िस्मत को समझकर उम्र भर पछतायँगे ॥
गर हमें मिल जायँ प्यारे साँवले राधारमण।
उनसे मिलकर फिर तो अपने जन्म का फल पायँगे ॥
बाग़ में देखो फला करते हैं लाखों फूल फल।
उनको शिकवा है कि गर सींचो न तो कुम्हिलायँगे ॥
परवानों को रोको मत इन्हें शमा पर गिरने दो।
पूरी होंगी हसरतें जल-जलके सब मर जायँगे ॥
'धर्म' इस क़ाबिल नहीं सरकार जो जल ही मरे।
ज़िंदगी बीतेगी योंही रात दिन कट जायँगे ॥

६० भजन (फुटकर)

[तर्ज़—नाहिं भूले सुरतिया लाल की]

मैं सहारे राधेश्याम के। श्याम के सिया राम के ॥
रक्षा करें चतुर्भुज स्वामी, दुइ कर कौने काम के ॥ मैं० ॥
करता को कोई नाहिं सुमिरत, रहत भरोसे चाम

के ॥ मैं० ॥ अब रक्षक प्रभु तुमहिं हमारे, निशि दिन आठों याम के ॥ मैं० ॥ रैन दिवस मैं रहत भरोसे, एक तुम्हारे नाम के ॥ मैं० ॥ 'धम' अजान और नहिं जाने, एक सिवाय प्रणाम के ॥ मैं० ॥

६१ राग तिल्लाना

[तर्ज़–मेरे कोठे ऊपर चोर ननदी धीरे बोलो ना]

दर्शन दीजे हे यदुराय, मेरो अवसर बीतो जाय ॥ मेरो० ॥ तुम्हरे दरश बिन हे नँदनंदन और कछू न सुहाय ॥ मेरो० ॥जो यहि बेर मिलो नहिं मोहन फिर का करिहौ आय ॥ मेरो० ॥ दुख-सागर में मग्न होत मैं, अब लीजै अपनाय ॥ मेरो० ॥ 'धर्म' अनाथ कहो कहें कासे तुमसा स्वामी पाय ॥ मेरो० ॥

६२ भजन

[तर्ज़–पपीहा काहे मचावे शोर]

कहो कित जाऊँ दीन अनाथ ।

विमुख भये सब सँग संबंधी, छोड़ दियो मेरो साथ ॥

कहो० ॥ दुखभंजन अब याही सोच में, जरत हमारो गात ॥ कहो० ॥ दुखसागर से बेगि उबारो, राखो हमारी लाज ॥ कहो० ॥ हे गिरिधारी पत रखवारी, आन गहो मेरो हाथ ॥ कहो ० ॥ हो कृपालु जन जान 'धर्म' पर, हे गोपिन के नाथ ॥ कहो० ॥

६३ भजन

[तर्ज़—हे गोविन्द राखु शरण अब तो जीवनहारा]

लाज है तुम्हारे हाथ दीनानाथ मेरी ।

सुनत प्रभु तुरंत धाय, दीनन जब टेरी । काहे कीन्ही हमारी बेर, दीनबंधु देरी ॥ लाज० ॥ अपनो नहिं मिलत कोइ, चहुँ दिशि मैं हेरी । शरणागत अब तो भई, दुःख-हरण तेरी ॥ लाज० ॥ मीरा पर आन पड़ी, विपत जब घनेरी । तबहीं किरपानिधान, दया-दृष्टि हेरी ॥ लाज० ॥ निशि दिन यह 'धरम' प्रभू, वंदना करेरी । कृष्णचंद्र शरण देहु, मैं तो भई चेरी ॥ लाज० ॥

६४ भजन

कौन विधि बरनूँ जग की रीत।
प्रिय परिवार मित्र अरु नारी, हैं सब धन के मीत॥
निर्धन के कोइ काम न आवत, छोड़ देत सब प्रीत।
विपत समय को कोइ नहिं साथी, छोड़त तन को सीत॥
दुखभंजन अब बेगि खबर लो, काहे भयो बिपरीत।
दुखसागर से पार होय जब, तबहीं 'धरम' की जीत॥

६५ भजन

[तर्ज़—बनरा बनी सँग राज़ी]

अरे कुबजा मोहन बिलमाए।
नित उठ रहस करत जो हम सँग अरे वही श्याम योग पठाए॥ अरे०॥ एक तो मैं नारी दूजे निपट गँवारी अरे तेहि पर प्रभु बिसराए॥ अरे०॥ दुख-भंजन सुनि नाम तुम्हारो रहूँ तुमहीं से ध्यान लगाए॥ अरे०॥ 'धरम' करत बिनती कर जोड़े अरे चरण कमल शिर नाए॥ अरे०॥

६६ भजन

[तर्ज़—नैनों ने मारी रे कटरिया]

मन हर लीन्हों रे मुरलिया।
मृदु मुसक्याय मोहिनी डाली, मन हर लीन्हों रे मुरलिया॥
वृन्दावन की कुंज गलिन में, ठाढ़ी निहारों रे डगरिया॥
रैन दिवस मोहिं कुछ न सुहावे, तुमहींसे लागीरेनजरिया॥
दुखसागर से केहि बिध उतरूँ, कोई न नाओ न खेवैया॥
भक्ति की नाव नाम का बेड़ा, राधारमणजी हैं खेवैया॥
दीन 'धरम' को याही भाव से, पार लगादो रे सँवलिया॥

६७ भजन

लीजे मोहिं उबार, शरणागत हूँ स्वामी।
अब आय बिपत ने घेरा, नहीं कोई भांति निपटेरा।
सुनो अब कृष्ण मुरार॥ शरणा० १॥
ऋण भयो मेरे शिर भारा, नहीं कोई यतन उद्धारा।
मैं केहि बिध पाऊँ पार॥ शरणा० २॥
दुखभंजन नाम तिहारो, ऋण से अब नाथ उबारो।

करूँ दिन-रात पुकार ॥ शरणा० ३ ॥
तुम बिन हे जन-सुखदाता, मुझे कोई नज़र नहीं आता।
'धरम' पति राखनहार ॥ शरणा० ४ ॥

६८ खेमटा

[तर्ज़—मनमोहन कब ऐहैं हमारी गली]

सखी कैसे कहूँ या मन की गती। मेरा छीनो है मन सब जग के पती ॥ सखी० ॥ त्याग दियो प्रभु मोहिं यहि भाँती, जैसे सदाशिव छोड़ी सती ॥ सखी० ॥ हमको योग, भोग कुब्जा को, ऊधो ये देखो हरि की अती ॥ सखी० ॥ देहु दरश प्रभु चाहे बिसराओ, तन मन से आई हूँ शरणागती ॥ सखी० ॥ दीन 'धरम' को दर्शन दीजे, कृष्णचंद्र या अवधपती ॥ सखी० ॥

६९ भजन

दुखभंजन मैं तुम्हरे सहारे।

शरण तुम्हारी तजि कित जाऊँ, दीनन के दुख टारनहारे ॥ दुख० ॥ दुखसागर संसार भयो है,

बाँह गहो प्रभु करो किनारे ॥ दुख० ॥ बिपति समय सब तज तज भागत, नाहीं सुनत कोई लाख पुकारे ॥ दुख० ॥ हमरी बिपत स्वामी तबही निवरि है, तन से निकरें प्राण हमारे ॥ दुख० ॥ करहु कृपा अब दीन 'धरम' पर, दर्शन दीजे नंददुलारे ॥ दुख० ॥

७० कजरी

हे नाथ जगतपति तुम बिन बिगड़ी कौन बनावेरे ।
मात पिता भ्राता सुत कोई काम न आवेरे ॥ हे नाथ ॥
निर्धन जान मित्रहू तज गए पास न आवे रे ॥ हे नाथ ॥
दीनन को प्रभु तुम बिन कोई दृष्टि न आवेरे ॥ हे नाथ ॥
हे दुखभंजन निशिदिन अपनी 'धरम' सुनावेरे ॥ हे नाथ॥

७१ खेमटा

सुन लीजे ये बिनती हमार, जसुदा नँद के लला ।
तुमसा मोहिं कोई नहिं दरसत,
हैं हम से तुमको हज़ार ॥ जसुदा० ॥
तन मन धन सब हित सों वारूँ,

ए तुम पर नंदकुमार ॥ जसुदा० ॥
गोबर्द्धन हँसकर गह लीन्हो,
ए भारी लगत मेरा भार ॥ जसुदा० ॥
'धरम' कहत अब दर्शन दीजे,
गोपिन प्राण-अधार ॥ जसुदा नँद के लला ॥

७२ भजन

[तर्ज़—ननदिया रे जिया न मानत मोर]

निठुर भए रे प्यारी सखी चितचोर ।
एरी सखी मैं कासे कहूँ दुख, चितवत नहीं मम ओर ।
सनी करी गोकुला नगरी, सुध कर कुहकत मोर ॥
आप तो जाय द्वारका छाए, मम दुख ओर न छोर ।
देहु दरश यह बिनती 'धरम' की, जसुदानंदकिशोर ।
निठुर भये प्यारी सखी चितचोर ॥

७३ भजन

मन भाई तुमरे चरणन की सेवकाई महाराज ।
अवध चैन बहुतेरे और वन में दुःख घनेरे ।

पर तुम बिन होइहै अवध बहुत दुखदाई महाराज ॥
जिमि देह बिना जिय केरी और रजनी विकट अँधेरी।
तिमि हुइहै नारी पुरुष बिन जग माँहीं महाराज ॥
कहै 'धरम' दोऊ कर जोड़े क्यों नाथ हमें अब छोड़े।
बहु दुखित भई अब नाथ कहूँ बिलखाई महाराज ॥

७४ दादरा

सिया प्यारे से हम लौ लगाय जायँगे।
तेरे चरणों में दिल को रमाय जायँगे ॥
चरण-कमल मेरे हृदय के बीच रम जायें।
कलेश मुझ पै जो पड़ते हैं सब वह थम जायें ॥
अगर हो कृपा तुम्हारी तो सब भरम जायें।
चरण-कमल के मेरे दिल पै नक़्श जम जायें ॥
हरि आएँ न आएँ बुलाए जायँगे ॥ १ ॥
कहाँ तो राज का सामान था हुआ वनवास।
गए जो वन को वहाँ और भी बढ़ा वस वास ॥
पिता-मरण सुना सीता-हरण की भी है त्रास।

उन्हें भी सदमे पड़े जिनका नाम है दुखनास ।
हर दिलको 'धरम' समझाए जायँगे ॥ २ ॥

७५ भजन

प्यारी मोहनिया मूरतिया जिय बसि गई रे ।
मुख-शोभा कछु कही न जाई
निरखि निरखि शशि रहो लजाई
खोज थके कवि मुख की उपमा ना दई रे ॥
ग्वाल बाल सँग खेलन हारे
धन्य कान्ह उनके रखवारे
गोकुल में श्रीकृष्ण दुहाई मचगई रे ।
ब्रजबालन पहले सुख दीन्हा
अब मथुरा में बसेरा कीन्हा
बहु दिन बीते श्याम खबरिया ना लई रे ॥
काह करूँ कुछ बन नहिं आवे
श्याम दरस बिन मोहिं न सुहावे
काह करे अब 'धरम' बिपतिया पड़गई रे ॥

७६ राग भैरवी

सुनो अब मेरी नंदकुमार ।
अधम उधारन दुःखनिवारन, तुमसे कहों पुकार ।
जान अजान मोहिं अपनाओ, कृपा करो करतार ॥
शरण गहे की लज्जा स्वामी, राखो वेग हमार ।
राखत 'धरम' दरश-अभिलाषा, तुमरी कृष्णमुरार ॥

७७ भजन

तुम बिन नाथ सुनै को मेरी ।
गज की टेर सुनी हित चित सों ।
धाय बिपत हर लीन्ह सबेरी ॥ सुनै को मेरी०
द्रुपद-सुता जब कृष्ण पुकारो ।
चीर बढ़ाय लगाई देरी ॥ सुनै को मेरी०
गोबर्द्धन सुध करो मनमोहन ।
भार सहित शरणागत तेरी ॥ सुनै को मेरी०
दीन 'धरम' को प्रभु अपनाओ ।
हूँ मैं हरिचोरनि की चेरी ॥ सुनै को मेरी०

७८ भजन

[तर्ज़—हे गोविंद राख शरण]

बंदौं हे प्राणनाथ पद-कमल तुम्हारे ।
गज की जब टेर सुनी तुरत ही सिधारे ॥ बंदौं०
टेरत मोहिं भा विलंब सुनत नहीं प्यारे ।
सब तजके दीन दुखी कृष्ण को पुकारे ॥
अब तो हे दीनबंधु तुम्हीं हो हमारे ॥ बंदौं०
दीनन की सुनतहि प्रभु काज सब सँवारे ।
हमरी बेर सुनत नाहिं नंद के दुलारे ॥ बंदौं०
डूबी मँझधार 'धरम' कीजिए किनारे ।
आई हूं शरण माहिं अब तो मैं तुम्हारे ॥ बंदौं०

७९ भजन

तजो रे मन मूरख तू अभिमान ।
चार दिना को जीवन जग में, काहे करत गुमान ॥ तजो०
मातपिता सुत कोई न दरशत निकर जायँ जब प्रान ॥ तजो०
ओम ओम कहो रोम रोम से, तब मिटिहै अज्ञान ॥ तजो०

बेग 'धरम' को पार करो प्रभु, कृष्णचंद्र भगवान॥तजो०

८० भजन

[केवट की श्रीरामचंद्र जी से बिनती]

बिनती श्रीदशरथ के नंदन मेरी मानिएरे।

चरण-प्रभाव बहुत विध जाना
शिला-चरित्र सुना मैं काना
काठ की नैया मेरी प्रभुजी जानिएरे॥ बिनती०

और काज कछु जानत नाहीं
याही ते परिवार जियाहीं
नैया नारी होय तो कहा बसाइएरे॥ बिनती०

नाथ न पग धोवै का कहिहौ
बिन पद धोए पार न जइहौ
लछमनजी बरु बान मोहिं पर तानिएरे॥ बिनती०

सुन केवट के बैन सयाने
मनही मन रघुवर मुसकाने
लेहु निषाद चतुर तुम पाँव पखारिएरे॥ बिनती०

और नाथ मोहिं कोई न दरशात
नैन 'धरम' दर्शन बिन तरसत
नाव भई अब बे केवट की, पार लगाइएरे ॥ बिन०

८१ भजन खेमटा

कैसे लेहुँ नाथ उतराई ।
तुम्हरी मजूरी जो अब हीं चुकैहौं
भवसागर को पार लगाई ॥ कैसे ०
जो मैं चरणकमल नहिं धोउतिउँ
अबहिं जात मोरी नाव उड़ाई ॥ कैसे०
यह मुँदरी इक अँगुरी को गहनो
पद-रज धोए कुटुम तरिजाई ॥ कैसे०
जन्म अकारथ जात 'धर्म' को
बिन दर्शन तुम्हरे रघुराई ॥ कैसे०

८२ भजन

बिनय सुन मेरी नंदकिशोर ।
तुमबिन मोहिं कोई नहिं दर्शत, खोजाफिरीसबओर॥ बि०

दुखसागर संसार भयो है, सूझत ओर न छोर ॥ बि०
दीन 'धरम' को दर्शन दीजे, गोपिन के चितचोर ॥ बि०

८३ भजन

सिया सोचत हरि लई ना खबरिया ।
छूटा साथ राम अस हरि को
दूर भई अब अवध नगरिया ॥ सिया०
चैन अयोध्या का याद न आवे
मन भाई थी कुस की सेजरिया ॥ सिया०
सोचत-सोचत अति बिलखानी
आयके डारी हनुमान मुँदरिया ॥ सिया०
देखत अँगूठी सिया मन थिर कीन्हों
हमरी बिपत को कोइ न निवरिया ॥ सिया०
'धर्म' कहत प्रभु दोउ कर जोरे
वेग पार करो हमरी उमरिया ॥ सिया०

८४ भजन

जिया मेरा बहुत घबराय, हनूमान लाओ खबर ।

सातों समुद्र पार तुम जाओ,
लंका के हाल ले आओ ॥ हनूमान०
दीन मुद्रिका चीन्ह हरी ने,
सीता को खबर जनाओ ॥ हनूमान०
हनुमत जाय खबर ले आए,
सीता को धीर बँधाओ ॥ हनूमान०
राखे 'धरम' कौन बिध धीरज,
प्रभुजी निपट भुलाओ ॥ हनूमान०

८५ राग मलार

हे प्रभु पार करो मेरी नैया, बीच हिलोरें खायरे।
सीतापति रघुनाथ दयानिधि, स्वामीको बिनतीसुनायरे।
दीनानाथ भक्तहितकारी, अब तो करो सहायरे ॥ हे०
मनमोहन गिरिधर बनवारी, गोपीनाथ कहायरे।
कृष्ण मुरारी असुर संहारी, काहे हमें बिसरायरे ॥ हे०
दुखसागर अति जोर बहत है, मन की चलत बयाररे।
बिन खेवट है 'धर्म' की नैया, दीजे पार लगायरे ॥ हे०

८६ सोहर

चलो देखो सखी नँदलाला भए
लाला भए गोपाला भए ॥ चलो०
जब प्रभु जन्म लियो मथुरा में ,
गोकुल उठाय तेहि काला गए ॥ चलो०
करत दान बहु नंदबबा जू,
आनँद मगन सब ग्वाला भए ॥ चलो०
मात जसोमत पटना लुटावै,
गावें गीत ब्रजबाला नए ॥ चलो०
हरदी दूब सुपारी नारियल,
लाईं फूलन के माला नए ॥ चलो०
गावे बधाई 'धरम' आनँद हुई,
कृष्णचंद्र किरपाला भए ॥ चलो०

८७ सोहर

गोकुल में बाजे रे बधैया।
नंद महेर सब दीन्हा लुटाई,

ओढ़नको राखी ना कमरिया ॥ गो०
मात जसोमत सगुन मनावे,
लालन को लागी रे नजरिया ॥ गो०
देतीं असीस सभी ब्रजबाला,
जुग जुग जीवे रे कन्हैया ॥ गो०
गोरे नंद जसोमत गोरी,
सुत कैसे जायो रे सँवरिया ॥ गो०
एरी सखी सुत जन्मो रात को,
साँवर भयो मुख पड़ गई अँधेरिया ॥ गो०

८८ सोहर

अरे जग में भयो अवतारा।
सुर नर मुनि गुण गावें, मन में बहुत सुख पावें,
भयो करतारा, अरे प्रभु टारन भयो महि भारा।
अरे तुम कारज करो संसार के॥ जग में० १॥
जब मथुरा जन्म लियो आई; दियो गोकुल तुरत पहुँचाई,
बिकट अँधियारी, अरे रवितनया बढ़ी अति भारी।

अरे प्रभु जमुना लगाओ थाह को ॥ जग में० २ ॥
जब गोकुल गए हैं कन्हाई, पितु मातु बहुत हर्षाई,
सखी सब आवें, अरे आनँद बधाई लावें।
अरे दिखला दे जसोमत लाल को ॥ जग में० ३ ॥
कहे 'धर्म' बहुत हर्षाई, चिरजीवें ये कुँवर कन्हाई।
नँद को लाला अरे आनँद मगन ब्रजबाला।
अरे सब देतीं बधाई नंद को ॥ जग में० ४ ॥

८९ भजन

ऊधो तुम इतनी विनय मेरी सँवलिया से कहना।
अबतो आवें दुःख छुड़ावें, देके दर्शन जुड़ावें दोऊ नैना॥
दिन रात चैन नहिं आती, वहाँ बैठे लिखी है मोहिं पाती।
सुख को ले गए, दुख को दे गए, तन मेरा ये जोग सहेना॥
मैंने मित्र भावसे जाना, वहाँ जाके बने हैं भगवाना।
दीन्हज्ञाना मैंनेही जाना, अब देखो 'धरम' मेरालहना॥
ऊधो तुम इतनी विनय मेरी सँवलिया से कहना।

९० खेमटा

[तर्ज़—झमाझम पानी भरेरी, कौने अलबेले की नार]

कहूँ मैं कर करके बिनती, तुम से हे नंदकुमार।
हे बनवारी गिरिवरधारी, आन गहो मेरा भार।
झाँझर नैया कोई ना खेवैया, जात बही मँझधार॥ कहूँ०
देर न कीजे कर गहि लीजे, बेग लगा दीजे पार।
'धर्म' तुम्हारे रहत सहारे, राखिए लाज हमार॥ कहूँ०

९१ बनरा

[तर्ज़—पपीहा काहे मचावे शोर]

सँवलिया बन्ना बना सखी आज।
मोर मुकुट पीताम्बर सोहे, साजे नटवर साज॥ सँव०
नैन पवित्र करो दर्शन से, दूल्हा बने व्रजराज॥ सँव०
राधारानी ने पति पायो है, कृष्णचंद्र महराज॥ सँव०
दूल्हन लैके चले मंदिर में, बिहँसत सारी समाज॥ सँव०
'धर्म' कहे चिरजीवे ये जोड़ी, जबतक गंगा-राज॥ सँव०

६२ बनरा

मेरा बन्ना है नंददुलारा, बनी वृषभानलली।
मोर मुकुट माथे पै विराजे, बिच-बिच लागीं कली॥बनी०
आनँद मगन सखा सब गावत, नाचै चंद्रावली॥बनी०
ब्याह रचो कुंजन में बिहारी, राधारानी छली॥बनी०
'धर्म' कहत कर जोर श्यामले, आजा हमारी गली॥बनी०

६३ मुबारकबाद

समा कैसा सुहाना है बहार आई मुबारक हो।
महक फूलों से हरसू खुशगँवार आई मुबारक हो॥
है सामाँ आज सेहरा बाँधने का सर पै दूल्हा के।
जिसे देखो है महिवे गुलशन आराई मुबारक हो॥
मुबारकबाद मेरा विष्णुजी महाराज को पहुँचे।
रमा बनकर है इस घर में दुल्हन आई मुबारक हो॥
मसर्रत नाचती फिरती है आँखों में मिरी हरसू।
कि मेरे दिलकी ख़्वाहिश आज बर आई मुबारक हो॥
मुबारक मात को हो लाल जो आँखों के तारे हैं।

जो है कौशल्यासी पुत्र को माई मुबारक हो ॥
मुबारकबाद लिक्खा 'धर्म' ने आनंद को पाकर ।
बड़े भाई ने छोटी सी बहू पाई मुबारक हो ॥

९४ ग़ज़ल

दरश दो श्याम यही दिल में है समाई हुई ।
ऊधो बेवक़ सिरी कृष्ण से जुदाई हुई ॥
जानते हम थे कि घनश्याम पलट आवेंगे ।
हरि तो आए न मेरी जगत में रुसवाई हुई ॥
हर समय नंदसुवन मेरी मदद करते थे ।
क्या करें हरि मेरी तक़दीर है रँग लाई हुई ॥
'धर्म' को वंशी सुना दें वो अगर कानों से ।
तब मैं जानूँ कि मेरी भी ज़रा सुनवाई हुई ॥

९५ ग़ज़ल

अता हो ऐ मेरे मुरलीमनोहर वह नज़र मुझको ।
नज़र तू दिल के अंदर आए हरदम जलवागर मुझको ॥
मिलेगा क्या तुझे फ़ुर्क़त, कि दोनों दिल किए घायल ।

न उनको है ख़बर मेरी न उनकी है ख़बर मुझको ॥
नेहाँ आँखों से है मेरी श्रीघनश्याम का जलवा ।
नज़र आता नहीं जज़्बे मोहब्बत का असर मुझको ॥
उचाट अपनी तबीयत है कुछ ऐसी आज दुनिया में ।
मिले दिल के बहलने के लिये कोई हुनर मुझको ॥
'धरम' किस तरह नामा आज उनके पास पहुँचाऊँ ।
कबूतर भी कटे बाज़ू के दिखलाते हैं पर मुझको ॥

६६ ग़ज़ल

जब झलक अपनी श्रीघनश्याम दिखलाने लगे ।
ख़ूबिए तक़दीर पर हम दिलमें इतराने लगे ॥
जब हुआ जलवा निहाँ आँखों से राधाकृष्ण का ।
चश्म तर होकर ज़मीं पर अश्क बरसाने लगे ॥
रात दिन बदले ज़माना हमसे बरहम हो गया ।
ख़्वाब भी कुछ और रंगत के नज़र आने लगे ॥
क़ल्बे सोज़ां की फ़ुग़ाँ का हो गया उल्टा असर ।
आसमाँ शबनम के बदले आग बरसाने लगे ॥

दम भरा करते थे अब तक तुम 'धरम' की बात का ।
आज हमको क्यों भरी महफ़िल में शरमान लगे ॥

६७ ग़ज़ल

भरोसा त्याग दे जग का गुरू निर्वाण पद देंगे ।
मिटाकर भर्म सब मन का तुझे फिर ज्ञान पद देंगे ॥
करो पूजा गुरूपद की समझकर रूप ईश्वर का ।
न मानेंगे तुम्हारे धर्म को, जन जान पद देंगे ॥
बसी रहती है निशि दिन 'धर्म' के मन में यही इच्छा ।
मिले दर्शन गुरू के तो मुझे भगवान पद देंगे ॥

६८ ग़ज़ल गुरदेव-वियोग में व्याकुलता

गुरुदेव क्यों छिपे हो देकर मुझे सहारा ।
अपराध कौन सा है मैंने किया तुहारा ॥
गुरुदेव पद का जलवा आए नज़र जो मुझको ।
दिनकर समान चमके फिर भाग्य का सितारा ॥
यह थी तुम्हारी दाया चरणों में मन लगाया ।
पापी जो मुझको पाया तुम कर गए किनारा ॥

दुष्टों के पाप सारे एक आन में निवारे।
अब हो कहाँ पधारे करके मुझे इशारा॥
निशि दिन विनय सुनाऊँ कर जोड़ सर नवाऊँ।
दर्शन तुम्हारे पाऊँ क्यों 'धर्म' को बिसारा॥

९९ भजन राग जोगिया

आज मेरे गुरदेव पधारे।

नहिं पूजा नहिं सेवा स्वामी नहिं धन धाम हमारे।
कौनी बिध सम्मान गुरू का होइहै ये मन शोच बड़ारे॥
तन का घर मन की अँगनाई कोठ कोठ चौबारे।
यहिविध प्रविशे गुरु यहि घरमें तन मन सब मेरे भए सुखारे
हिरदै को आसन गुरु दीन्हों अँसुवन चरण पखारे।
नखसिखलौंनिरखतदोउनैननयहविधमैंगुरुआरतउतारे।
पुण्य सनेह चढ़ाय गुरू पर तन मन धन सब वारे।
भोग लगाऊँ केहि विध तुम्हरो चार पदारथ भोगनहारे॥
बही जात मँझधार माहिं गुरु कीजै मोहिं किनारे।
हूँ मैं पतित पतितपावन तुमयह सँयोगविधि आपसँवारे॥

गुरु ब्रह्मा गुरु विष्णु सदा शिव गुरु कुलपूज्य हमारे।
यहि विध'धर्म' विनय बड़ भागी कब लग प्रभु मोहिं रहियो बिसारे ॥ आज० ॥

१०० भजन

गुरुदेव परम परबीन प्यारे तन मन वार रही।
गुरु के चरणकमल अति कोमल हिय बिच धार रही।
गुरू पाय सब पार उतर गए मैं मँझधार रही ॥ गुरु०
मैं मग में ठाढ़ी पछताऊँ राह निहार रही ॥ गुरु०
सोवत जागत 'धर्म' दिवस निशि तुम्हें पुकार रही ॥

१०१ भजन

धरो रे मन गुरु-चरणन में ध्यान।
जब गुरु मंत्र पढ़त कानन में मिटत सकल अज्ञान ॥
जो गुरु-भक्ति धरत हिरदै बिच पावत पद निर्बान ॥
कर्महीन नर वह जग उपजे जो हैं 'धर्म' समान ॥

१०२ भजन

सतगुरु मोहिं दीजै ज्ञान हो।
कृपादृष्टि अब हेरो दयानिधि मेटो सकल अज्ञान हो,

सब तजि भक्ति करो सतगुरु की पाओगे पद निर्बान हो।
गुरु-हीन नर 'धर्म' जगत में कैसे मिलैं भगवान हो॥

१०३ दोहे

मन मूरख मत सोचकर, लाज उन्हीं के हाथ।
आपै काज सँवारिहैं, वे प्रभु दीनानाथ॥ १॥
यह वर दीनदयाल अब, देहु कृपाकर मोहिं।
पावों इतनी बुद्धि मैं, जान सकौं प्रभु तोहिं॥ २॥
तुम देखत औगुण किए, केहि विधि तुमको भाउँ।
अब तो तुम्हरी शरण हूँ, कहो कहाँ को जाउँ॥ ३॥
हे अंतर्यामी प्रभु, सब कुछ जाननहार।
फिर मैं अपने भेद को, कहा करूँ विस्तार॥ ४॥
जो नहिं हम देखें तुम्हें, तुम देखत दिनरात।
केहि विधि निबहै मित्रता, जान लेहु यह बात॥ ५॥
जन्म भयो जेहि समय से, कीन्ह तोर प्रतिपाल।
मन मूरख सुमिरत नहीं, काहे दीनदयाल॥ ६॥
सुमिरन से गति बनत है, प्रभु माँगत कुछ नाहिं।

सोऊ मन नहिं करत है, ताहू में अलसाहिं ॥ ७ ॥
जो कबहूँ मुख से कहो, कृष्ण सियापति राम।
पलटा तुरतै लै लिओ, पूरण कीजै काम ॥ ८ ॥
खान पान की जो खबर, निशि दिन तुम्हरी लेत।
ताके पलटे तुम कहो, उनको क्या हौ देत ॥ ९ ॥
हे मन मूरख त्याग दे, या मन सों अज्ञान।
सब से उत्तम जानिए, सुमिरन श्रीभगवान ॥ १० ॥
करो कृपा प्रभु जान जन, अब लीजै अपनाय।
चरणकमल की भक्ति मोहिं, दीजै हे यदुराय ॥ ११ ॥
छोटे मुख बड़ बात है, कहूँ जोड़ कर हाथ।
क्षमा कीजिए 'धरम' को, देहु दरश ब्रजनाथ ॥ १२ ॥
तुम तो हो प्रभु जगत के, सब कुछ जाननहार।
मैं अति दीन अनाथ हूँ, तुम पति के रखवार ॥ १३ ॥
तुम बिन ऐसो कौन है, जो ले मोहिं उबार।
दीनबंधु बिन दीन को, कहौ कौन रखवार ॥ १४ ॥
तन के छूटे का भयो, जो मन छूटे नाहिं।

सत्य सनेही जानके, फिर तनसे मिल जाहिं ॥ १५ ॥
निश्चय कर मन से कहूँ, दोऊ उठाए हाथ।
अब नहिं मोहिं बिसारि हैं, वे त्रिभुवन के नाथ ॥ १६ ॥

सोरठा

उनहीं को है लाज, अब हम ऐसे दीन की।
लें सुधार सब काज, प्रभु नहिं 'धर्म' बिसारि हैं ॥

१०४ सवैया (स्तुति)

बंदौं दीनदयाल कृपानिधि दोउ कर जोर कहूँ बनवारी
जानअजान दया करिए प्रभु चाहतहौं अस्तुतिअनुसारी
मत मेरी रंक सुनो यदुनंदन और मनोरथ है अति भारी
हे दुखभंजन जनमनरंजन तुम बिनको सुधि लेइ हमारी
बीच सभा दुर्योधन की जब खैंचत दुष्ट दुशासन सारी
व्याकुल ह्वै अति संकटमें श्रीकृष्ण शरण महँ कीन्ह गुहारी
चीर बढ़ाय दियो प्रभु जाय हमें बिसराय कहाँ हो मुरारी
हे दुखभंजन जनमनरंजन तुम बिनको सुधि लेइ हमारी
भेद तुम्हारो न पावत है कोइ ब्रह्मा विष्णु थके त्रिपुरारी

एक समय गजराज के कारण आप भए प्रभु हर अवतारी
बाद पड़ी प्रहलाद पिता सों प्रकट भए फिर खंभमँझारी
हे दुखभंजन जनमनरंजन तुम बिन को सुधि लेइ हमारी
होत विकल मैं दीन धरनि पर नाथ हरो यह संकट भारी
हे गिरिधारी पति रखवारी बेगि सुनो प्रभु टेर हमारी
त्याग दई सुध मेरी सबै अब तुमजनित्याग हुगिरिवरधारी
हे दुखभंजन जनमनरंजन तुम बिनको सुधि लेइ हमारी
स्वामी सुसाहब की बिनती केहि भाँतिकरूँ मैंनारीअनारी
नारिन में गुणवान नहीं बुधिहीन महा मतिमंद गँवारी
लीजिए बेगि उबार कृपानिधि आन पड़ो यह संकट भारी
हे दुखभंजन जनमनरंजन तुम बिन को सुधि लेइ हमारी
मुझसी अनाथके नाथ तुम्हीं रखलेवतुम्हीं यहलाजहमारी
जो यहि बेर करो अब देर तो होइ अवशि संसार में हारी
जानिके दासी दयानिधिकी सब लोग हँसैं मोहिं दैदै तारी
हे दुखभंजन जनमनरंजन तुम बिनको सुधि लेइ हमारी
हार चुकी बहु बार मैं भार तो लेव विचार गए जो बिसारी

या मन की सुनि लेव कृपानिधि सत्य कहूँ तुमसे बनवारी
ममलाज सभाबिच्च आजगई तो कितरहिहै मर्याद तिहारी
हे दुखभंजन जनमनरंजन तुम बिन को सुधि लेइ हमारी
जोड़तहैकर 'धर्म' विनय सुनि लेउ मेरी अबश्यामविहारी
जानत हो प्रभु काज सबै निज भेदको काह करौंविस्तारी
तुम बिन नाथकहूँ कितजाय गुहार सुनो अब कृष्णमुरारी
हे दुखभंजन जनमनरंजन तुम बिन को सुधि लेइ हमारी

चौपाई

पद्य गहौ प्रभु शरण भई को। राख लेहु मेरी लाजगई को

दोहा

आय पड़ी मैं भँवर बिच, दुख की नदी अथाह।
चौगिरही संकट पड़्यो, प्रभु के हाथ निबाह॥ १॥
मो समान नहिं दीन कोइ, तुम सम दीनदयाल।
लज्जा मेरी राख लो, कृष्णचंद्र गोपाल॥ २॥

इति शुभम्

श्रीकेसरीदास सेठ सुपरिंटेंडेंट द्वारा नवलकिशोर-प्रेस, लखनऊ में मुद्रित और प्रकाशित